ॐ

शान्ति श्लोक

हरिः ॐ। वाङ्मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावीर्म एधि वेदस्य न आणीस्थः श्रुत मे मा प्रहासीरनेनाधीतेनाहो रात्रान्संदधाम्यृत वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि तन्मामवतु तद्वक्तारमवत्ववतु मामवतु वक्तारमवतु वक्तारम्।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

हरिः ॐ

मेरी वाक्शक्ति का मूल मेरे मन में है

मेरा मन मेरी वाणी के आश्रित है

हे ब्रह्म ! आप स्वयं अपना दर्शन दें

हे मन और वाणी वेदों के अर्थ समझने की योग्यता मुझ मे दो। जो कुछ मैंने सुना है वह मैं न भूलूँ। मैं स्वाध्याय में रात दिन एक कर देता हूँ। मैं सत्य का विचार करता हूँ ! सत्य ही बोलता हूँ। वही सत्य मेरी रक्षा करे—मेरे गुरु की रक्षा करे ! गुरु की रक्षा करे ! गुरु की रक्षा करे।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

परा पूजा
(सर्वोत्तम प्रकार का पूजन)

हे भगवान केशव ! मैं यह क्या सोचता हूँ ? मैं आपको कैसे प्रसन्न करूं ?

१—स्वयं गङ्गाजी आपके चरणों से बह रही हैं, क्या मैं फिर भी आपके अभिषेक के लिए जल लाऊँ ?

२—सच्चिदानन्द स्वरूप ही आपका आवरण है। अब मैं और कैसा पीताम्बर आपको पहनाऊँ ?

३—आप स्थावर जङ्गम सभी जीवों में वास करते हैं, हे वासुदेव ! अब मैं आपके बैठने के लिए कैसा आसन दूँ।

४—सूर्य और चन्द्रमा आपकी नित्य सेवा करते हैं, तब व्यर्थ दर्पण आपको मैं क्यों दिखाऊँ ?

५—आप प्रकाश के भी प्रकाश हैं, अत मैं आपके सामने और कौन सा प्रकाश रखूँ ?

६—आपके स्वागत गान में रात दिन अनाहत शब्द हुआ करता है। क्या मैं तब भी आपके प्रीत्यर्थ घंटा और शङ्ख बजाऊँ ?

७—चारों वेद चारों वाणियों से आपका गुणगान करते हैं, अब मैं और कौन सा गीत आपको प्रसन्न करने को सुनाऊँ ?

८—सब रसों में आपका ही स्वाद है। हे राम ! अब मैं आपके सामने कौन पदार्थ रखूँ ?

ॐ

प्रार्थना

हे अन्तर्यामिन्! हे हृदयवासी भगवन्! हे दीनबन्धो! हे अनाथों के रक्षक! हे पतितोद्धारक! हमारे पापों को क्षमा कीजिये। हमारे ऊपर कृपा कीजिये। हे स्वामिन! महाशान्ति को प्राप्त करने का सरलतम मार्ग दिखला दीजिये। हमारे ज्ञानचक्षु खोल दीजिये जैसे आपने एक बार अपने मित्र और भक्त अर्जुन को ज्ञान चक्षु दिये थे, वैसे ही हमें भी दीजिये। हमारे अन्धकारपूर्ण अध्यात्म मार्ग को प्रकाशित कर दीजिये। हम मृत्युलोक-वासियों पर जो सांसारिक बोझ से दबे हैं, कृपा कीजिये जिससे हम लोगों के दुख मय जीवन में सुख की ज्योति का प्रकाश हो।

हे सर्वव्यापी सत्यस्वरूप भगवन! हमारे अहङ्कार, काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, जड़ता और माया का नाश कीजिये, हमें शुद्ध कीजिये, हमारा जीर्णोद्धार कीजिये और हमारा अन्त करण शुद्ध होवे। हममें इतना बल दीजिये कि जिससे हमें योगाभ्यास मे सफलता मिले।

हरिः ॐ तत्सत

ॐ शान्तिः

अनुवादक तथा प्रकाशक का वक्तव्य

आज हम बड़ी प्रसन्नतापूर्वक स्वामी शिवानन्द सरस्वती की "प्राणायाम और अनन्त शक्ति" नामक पुस्तक हिन्दी के पाठकों के सामने रखते हैं। मासिक "आलोक" में यह पुस्तक लेखमाला के रूप में छप चुकी है। अब यह पुस्तकाकार पाठकों के सामने है। मूल अंग्रेजी पुस्तक की भाषा कहीं कहीं बड़ी क्लिष्ट है और उसके अनुवाद करने में हमें बड़ा परिश्रम करना पड़ा है। किन्तु भगवान् की निर्हेतुकी कृपा से आज हमारा परिश्रम पुस्तक के रूप में प्रस्तुत है। हम दावे के साथ कहते हैं कि इस समय हिन्दी साहित्य में प्राणायाम के ऊपर इतनी अच्छी एवं वैज्ञानिक ढंग से लिखी हुई पुस्तक दूसरी नहीं है। इस पुस्तक को पढ़ने वाले हमारी बात का समर्थन अवश्य करेंगे। हम पाठकों से विशेष रूप से प्रार्थना करेंगे कि उपसंहार में दिये, योगी के आहार वाले अध्याय को ध्यान से पढ़ें। कहने की आवश्यकता नहीं है कि, स्वामीजी इस विषय के एक प्रामाणिक विद्वान् हैं। प्राच्य दर्शनों के साथ साथ आप पाश्चात्य चिकित्सा शास्त्र के D हैं। प्राच्य और पाश्चात्य विद्याओं के मंथन से निकले "इस प्राणायाम और अनन्त शक्ति" को पढ़ कर, आशा है कि, हिन्दी भाषा भाषी पाठक लाभ उठायेंगे।

अन्त में हम अंग्रेजी पुस्तक Science of Pranayam के मूल लेखक स्वामीजी और प्रकाशक मि० विनयागम सम्पादक

My Magazine of India, मद्रास को, पुस्तक का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने की आज्ञा देने के लिए हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

प्रतापनारायण चतुर्वेदी

प्रयाग—श्रावण कृष्ण १३, सं० १९९५ वि०

लेखक की भूमिका

आज दिन शीघ्र गमन के लिए भौतिक संसार में रेल, स्टीमर, हवाई जहाज आदि शीघ्रगामी सवारियाँ हैं, किन्तु योगियों का दावा है कि, योगाभ्यास द्वारा शरीर इतना हलका किया जा सकता है कि, आकाश में उड़ता हुआ मनुष्य पल भर में इच्छानुसार कहां भी जा सकता है। योगी लोग ऐसी ऐसी जादू की मल्हमें जानते हैं कि, जिनके पैर में तलुआ में लगाते ही मनुष्य बहुत थोड़े समय में पृथ्वी के किसी भी भाग में सरलता से पहुँच सकता है। खेचरी मुद्रा के अभ्यास द्वारा, जिसमें जीभ को बढ़ाकर नासाछिद्रों के मूल में लगाया जाता है, योगी हवा में उड़ सकता है। मुँह में योग की गुटका को रख कर, पलक मॉंजते मनुष्य कहीं भी पहुँच सकता है। जब कभी हमें अपने दूरस्थ सम्बन्धियों के कुशलसमाचार जानने होते हैं, तो हम आवश्यकतानुसार तार या चिट्ठी भेजते हैं। किन्तु योगियों का दावा है कि, वे ध्यान द्वारा दूर से दूर संसार के किसी स्थान का भी हाल बतला सकते हैं या कुछ सेकंड में ही मन को उस जगह भेज कर, वहाँ का ठीक ठीक हाल जान सकते हैं। योगी लाहिड़ी, जिनकी समाधि आज भी काशी में बनी हुई है, अपने अफसर की स्त्री का स्वास्थ्य जानने के लिए ध्यान द्वारा लंदन गये थे। बहुत दूर रहने वाले मित्र की बात सुनने के लिए आजकल

टेलीफोन या बेतार का तार है, किन्तु योगियों का दावा है कि, दूर रहने वाले आदमी की कौन कहे, वे अदृश्य आकाशवासी देवताओं और ईश्वर तक के शब्द सुन सकते हैं। आज इस संसार में रोगी को अच्छा करने के लिए डाक्टर हैं, दवा है और तरह तरह के इन्जेक्शन हैं, किन्तु योगी का दावा है कि, वह कठिन से कठिन रोग को दृष्टि, स्पर्श या मन्त्रोच्चारण ही से अच्छा कर सकता है। रोगी की कौन कहे, वह मुर्दे तक को जीवित कर सकता है। इस प्रकार हम देखते हे कि, वर्तमान युग के बहुत समय पहले ही, योगीगण समझ चुके थे कि, इस जीवन में अध्यात्म विद्या का ज्ञान सब से अधिक महत्त्वपूर्ण है और उनको ज्ञात हो गया था कि, इस विद्या द्वारा इस भौतिक संसार में थोड़े ही समय में, असम्भव बात भी कर दिखाना असम्भव नहीं है। आज भी भारतीय जीवन में, यह प्रवृत्ति सर्वोपरि है। इसीलिए कोई आश्चर्य नहीं कि, आज भी लोग अपनी बहुत सी कठिनाइयों में वजाय वैज्ञानिकों के साधु सन्यासियों के पीछे ही अधिक दौड़ते हैं। कभी कभी साधुओं की चमत्कारपूर्ण शक्तियों की कथाएँ सुन पड़ती हैं, जिनसे वे असाध्य रोगों को, जिन पर किसी की दवा काम नहीं करती, अच्छा कर देते हैं। आज भी भारतवर्ष में ऐसे बहुत से योगी जंगलों, शहरों, पहाड़ों और कन्दराओं में घूमा करते हैं, जिनके पास ऐसी चमत्कारपूर्ण शक्तियाँ हैं। ये योगी लगातार मन को एकाग्र करते हुए भिन्न भिन्न योग-सिद्धियाँ प्राप्त कर लेते हैं। सिद्धियों

के प्राप्त करने वाले साधु, सिद्ध कहलाते हैं। जिस उपाय द्वारा उन्हें सिद्धि प्राप्त होती है, उसका नाम साधन है। इन साधनों में प्राणायाम सब से बढकर महत्वपूर्ण साधन है। आसन के अभ्यास से तुम स्थूल शरीर को अपने अधिकार में ला सकते हो और प्राणायाम द्वारा तुम सूक्ष्म शरीर को, जिसे लिङ्ग शरीर भी कहते हैं, अधिकार में ला सकते हो। श्वास और स्नायु तरङ्गों के बीच घनिष्ट सम्बन्ध होने के कारण श्वास के ऊपर अधिकार होने पर, योग का मर्मस्थल आभ्यान्तरिक तरङ्गों पर अधिकार हो जाता है।

भारतीय धर्म में प्राणायाम का स्थान बडा महत्वपूर्ण है। सवेरे दोपहर और शाम को प्रत्येक ब्रह्मचारी और गृहस्थ को तीन बार नित्य पूजन के समय सन्ध्या में प्राणायाम करना पडता है। हिन्दुओं के सब धार्मिक कार्य प्राणायाम करने के बाद ही किये जाते हैं। खाने, पीने किसी बात के सङ्कल्प करने आदि के पहले प्राणायाम करके तब मन के सामने उक्त कार्य-विशेष को उपस्थित किया जाता है। प्राणायाम को सब कार्यों में पहले करने का तात्पर्य यह है कि, पहले प्राणायाम करने से मन सीधा उस काम में लगेगा, जिससे इच्छित कार्य में सफलता अवश्य मिलेगी। प्राणायाम करके किसी काम को करना सफलता की गारटी कराना है। यहाँ मैं उस स्मरणशक्ति के चमत्कार का भी कुछ हाल कहता हूँ, जो सौ चीजों पर सयम कर के प्राप्त होती है जिसे शतावधान कहते हैं, जिसमें जल्दी जल्दी अनेक

मनुष्य सौ प्रश्न शतावधानी से करते हैं। कहीं शतावधानी की जबानी परीक्षा ली जाती है, तो कहीं मानसिक गणित करने की परीक्षा। कहीं शतावधानी को सोचने का भी समय न दे कर, कला सम्बन्धी सौ प्रश्न करके उसकी परीक्षा की जाती है। सब प्रश्न हो जाने के बाद, शतावधानी क्रम से उसके सौ प्रश्नों के उत्तर देता है। बहुधा इस तरह के प्रश्नों के उत्तर तीन या अधिक बार में दिये जाते हैं। हर एक बार में प्रत्येक प्रश्न के उत्तर का कोई भाग बतलाता जाता है और दूसरे बार में छोडे हुए स्थान से उत्तर आरम्भ कर, पूरा उत्तर बतला दिया जाता है। यदि गणित के प्रश्न हुए, तो प्रत्येक प्रश्न को मन में हल करके प्रश्न के साथ ही साथ क्रम से उत्तर भी बतलाये जाते हैं।

इस प्रकार मानसिक एकाग्रता का परिचय, केवल मस्तिष्क सम्बन्धी ही नहीं होता, बल्कि कभी तो पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के सम्बन्ध की एकाग्रता का भी परिचय मिलता है। कुछ छोटी छोटी घंटियाँ ले लो। उनमें अलग अलग चिन्ह लगा दो। और उन भिन्न भिन्न घंटियों की आवाज़ को, शतावधानी को एक बार ध्यान से देख सुन लेने दो। इसी तरह एक ही रूप रंग की अलग अलग चिन्ह लगी चीजें एक बार अवधानी को देख लेने दो। अब जब कि वह अन्य कोई काम कर रहा हो, उस समय सहसा कोई घंटी बजे या एक ही रूप रंग की चीज सहसा उसके सामने आ जाय तो वह चट उस घंटी या उस चीज की संख्या या चिन्ह बता देगा। इसी तरह उसके स्पर्शज्ञान की

परीक्षा की जाती है। इस तरह के स्मरशक्ति के चमत्कार भारतवर्ष के सिवाय संसार के अन्य देशो मे अज्ञात हैं। हिन्दुओ की इस अद्भुत स्मरणशक्ति और एकाग्रता के रहस्य का एकमात्र कारण उनका नित्य प्राणायाम का अभ्यास है।

स्थूल पृथ्वी पर जो जीवनी शक्ति प्रत्येक वस्तु का चालन करती दीख पड़ती है और जो मानसिक संसार मे विचार के रूप मे रहती है उसका नाम प्राण है। प्राणायाम शब्द के अर्थ है, जो जीवनी शक्ति को रोके। जो जीवनी शक्ति निरन्तर मनुष्य के स्नायुओ से निकला करती है, उसीको अधिकार मे लाने की जो क्रिया है, उसीका नाम प्राणायाम है। यही प्राणशक्ति मांसपेशियो का चालन करती है और बाह्य जगत का अनुभव कराती है और इससे आभ्यान्तरिक विचार उत्पन्न होते हैं। यह शक्ति इस तरह की है कि, इसे हम पाशविक शरीर का शक्तिसार visviva कह सकते हैं। प्राणायाम द्वारा इसी शक्ति पर अधिकार करना योगियो का लक्ष्य होता है। जो इस शक्ति को अपने अधिकार मे कर लेता है, वह स्थूल और सूक्ष्म जगत मे अपनी स्थिति पर ही नही वरिक सारे विश्व पर विजय प्राप्त कर लेता है। प्राण ही विश्व जीवन का सार है, इसीके सूक्ष्म सिद्धान्त पर सारे ब्रह्माण्ड का प्रस्तुत रूप हुआ है और यही दैवी शक्ति विश्व के अन्तिम लक्ष्य तक ले जा रही है। सारा विश्व ही योगी का शरीर है। जिस जड़ पदार्थ का उसका शरीर बना है उसीसे विश्व की उत्पत्ति हुई है। जिस

महाशक्ति से सारा विश्व परिचालित होता है उसीमे भिन्न, उसके शरीर की नसो को परिचालन करने वाली शक्ति नहीं है। इसलिए शरीर के ऊपर विजय प्राप्त करने के अर्थ हैं, प्रकृति की शक्ति के ऊपर अधिकार करना। हिन्दू दर्शन शास्त्र के अनुसार सारी प्रकृति दो मुख्य पदार्थों से बनी है। एक है आकाश या ईथर, दूसरा है प्राण या परिचालन-शक्ति। इन दोनो की तुलना आजकल वैज्ञानिको के जड़ पदार्थ और वेगदायिनी शक्ति अथवा matter and force से की जा सकती है। इस विश्व मे जिस किसी के आकार है, और जिसकी भौतिक स्थिति है वह सब सर्वव्यापक और सब जगह रहने वाले सूक्ष्म आकाश से ही उत्पन्न हुआ है। गैस, तरल तथा स्थूल रूप में केवल सारा विश्व, जिसमें सारा सौर जगत तथा अन्य ऐसे ही असंख्य सौर जगत ही नहीं, बल्कि जो कुछ सृष्टि शब्द के अन्तर्गत हैं, वह सब इसी सूक्ष्म तथा अव्यक्त आकाश से उत्पन्न हैं, और अन्त में इसीमें आ कर लीन भी हो जायगा। इसी तरह प्रकृति की शक्ति जितने नामों से मनुष्य को ज्ञात है, जैसे गुरुत्वाकर्षण, प्रकाश, तेज, विद्युत, आकर्षण आदि जो कुछ भी उत्पादक शक्ति, स्थूल सृष्टि, स्नायु तरङ्गें, पाशविक बल, विचार तथा अन्य मानसिक शक्तियाँ जो अधिक से अधिक मनुष्य जानता है, वे सब विश्व प्राण के ही भिन्न भिन्न रूप हैं। प्राण से ही ये विभिन्न नामधारी शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं और प्राण ही मे लीन हो जाती हैं। इस विश्व की सब तरह की शारीरिक या मानसिक

शक्तियों का उद्गम, यही मूल शक्ति है। किसी भी पदार्थ में, इन दोनों के अतिरिक्त और कोई नयी चीज नहीं होती। पदार्थ और शक्ति का संयम ही प्रकृति के दो मूल नियम हैं। जहाँ एक शिक्षा यह बतलाती है कि इस विश्व आकाश का पूर्ण योग अविरल है, तो वही दूसरी शिक्षा बतलाती है कि वह शक्ति जो विश्व को परिचालित कर रही है अनन्त है। सृष्टि के अन्त में इस शक्ति के भिन्न भिन्न रूप नष्ट हो कर, वह प्रच्छन्न हो जाती है। इसी तरह अन्त में आकाश भी अव्यक्त हो जाता है। किन्तु नवीन सृष्टि उत्पन्न होते ही शक्ति का प्रस्फुरण होता है और आकाश में चालित होते ही असंख्य आकृतियों की सृष्टि होने लगती है। इसी तरह आकाश में परिवर्तन होते ही आकाश की तरह प्राण भी बढ़ता घटता है। योगी के लिए चूंकि यह शरीर सूक्ष्म जगत है, जिसमें ज्ञानेन्द्रियाँ ही सूक्ष्म आकाश और स्नायु-विचार तरङ्गें ही विश्व-प्राण है, अतः उनके परिचालन के रहस्य का ज्ञान और उनका नियन्त्रण ही सर्वोच्च ज्ञान की प्राप्ति और विश्व के ऊपर विजय का प्राप्त करना है। योग की भाषा में प्राणायाम का वास्तविक अर्थ है वह साधन जिससे हम जीवनी शक्ति प्राण के रहस्य का ज्ञान और उस पर अधिकार प्राप्त करें।

इस प्राण को जिसने अपने अधिकार में कर लिया उसने विश्व जीवन का मर्म जान लिया। जिसने इस सार वस्तु को अधिकार में करके उस पर अपना नियन्त्रण कर लिया, उसने अपने शरीर पर ही नहीं, किन्तु विश्व के सब विग्रहवान् जीवों

और वस्तुओं पर अधिकार कर लिया। इस तरह प्राणायाम, जिसका अर्थ है, प्राण पर अधिकार करना, वह साधन है, जिसके द्वारा योगी अपने छोटे से शरीर में विश्वजीवनी का अनुभव करता है और विश्व की सब शक्तियों पर अधिकार प्राप्त कर पूर्णता प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। उसके सब व्यायामों और शिक्षाओं का यही लक्ष्य है।

इसलिए अब देर क्यों करें। देरी करने का मतलब है, कष्टों और यातनाओं को बढ़ाना। हमें शीघ्रता करनी चाहिए और शीघ्र ही लडभिड़ कर समय रूपी जल पर बाँध बाँधना चाहिए। प्रकृति के विशाल युगों के समय को हमें अपने जीवन में संक्षिप्त करके विचारशक्ति और क्रिया के बल, शारीरिक साधना द्वारा, शीघ्र ही अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाहिए। उस अनन्त ज्ञान, अनन्त शक्ति और अनन्त शान्ति को हम अकेले एकान्त ही में क्यों न प्राप्त कर लें।

इस समस्या की पूर्ति योग की शिक्षा ही से होगी। योग के बृहत् विज्ञान का यही एक लक्ष्य है, जिससे मनुष्य संसार-सागर के पार हो जाय, जिससे उसकी शक्ति बढ़े, ज्ञान की वृद्धि हो और आत्मा के साथ एकीकरण की योग्यता प्राप्त हो।

ॐ शान्ति.

स्वामी शिवानन्द

"आनन्द कुटीर"
हृषीकेष।

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

प्राणायाम और अनन्त शक्ति

प्रथम अध्याय

प्राण और प्राणायाम

प्राणायाम एक पूर्ण वैज्ञानिक क्रिया है। अष्टाङ्ग-योग का यह चतुर्थ अङ्ग है। **"तस्मिंसति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः"**–पातञ्जलि। अर्थात इच्छानुसार साँस लेने और छोड़ने की क्रिया को रोकने पर अधिकार प्राप्त करने का नाम प्राणायाम है, जो कि आसन विजय के बाद ही प्राप्त होता है। प्राणायाम की यह परिभाषा पातञ्जलि योग-सूत्र अध्याय २ सूत्र ४९ में दी गयी है।

नासिका द्वारा अन्दर ली जाने वाली साँस को श्वास और नासिका के बाहर जाने वाली श्वास को प्रश्वास कहते हैं। श्वास जीवनदाता प्राण का बाह्य रूप है। विद्युत की तरह श्वास प्राण का स्थूल रूप है। स्थूल श्वास के सूक्ष्मरूप ही को प्राण कहते हैं। स्थूल श्वास के ऊपर नियन्त्रण करने से सूक्ष्म प्राण के ऊपर भी नियन्त्रण किया जा सकता है। प्राण के ऊपर नियन्त्रण होने का तात्पर्य है मन पर अधिकार। प्राण की सहायता बिना मन काम

ही नहीं कर सकता। प्राण की गति ही से मन में चञ्चलता उत्पन्न होती है। यह सूक्ष्म प्राण ही वह वस्तु है जिसका मन से घनिष्ट सम्बन्ध है। प्राण मन को ओवर काट की तरह ढके रहता है। श्वास शरीर के लिए उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि एक एंजन मे फ्लाई ह्वील (वह चक्र जो एंजिन चलाता है)। जैसे ड्राइवर के फ्लाई ह्वील रोकने ही एंजिन के सब कल पुरजे काम करना रोक देते हैं वैसे ही योगी के श्वास रोकते ही शरीर के सब अवयव अपना अपना काम बन्द कर देते है। इसी तरह यदि तुम स्थूल श्वास पर अधिकार कर लेते हो, तो जीवनदाता प्राण पर भी सरलता पूर्वक अधिकार हो जायगा। जिस उपाय से श्वास प्रश्वास की गति पर नियन्त्रण किया जाता है, उसे ही प्राणायाम कहते है।

प्राण क्या है ?

जिसने प्राण तत्व को जान लिया उसने वेद जान लिया। यह श्रुति का महत्वपूर्ण वचन है। वेदान्त सूत्रों मे भी यह लिखा है कि, इन्ही कारणों से श्वास प्रश्वास को परब्रह्म कहते हैं। इस ब्रह्माण्ड मे जो कुछ भी शक्ति है, प्राण उन सब का सार या निष्कर्ष है। प्रकृति की सारी शक्तियों का आधार प्राण ही है, जो कुछ भी मनुष्य मे या उसके आस पास गुप्त या प्रगट शक्तियाँ हैं, उन सब का आधारभूत प्राण ही है। सब तरह की शक्तियाँ और सब तरह के बल तथा प्राण का उद्गम स्थान आत्मा है। शरीर

सम्बन्धी तथा मन सम्बन्धी जितनी भी शक्तियां हैं, वे सब प्राण ही के अन्तर्गत हैं। ऊपर से ऊपर और नीचे से नीचे जो कुछ भी होता है वह प्राण की शक्ति ही से होता है। इन्द्रियजनित संसार में जो कुछ भी दीखता है, वह सब एकमात्र प्राण ही की महिमा का फल है। आकाश प्राण का ही रूपान्तर है। प्राण का सम्बन्ध मन से, मन का बुद्धि से, बुद्धि का आत्मा से और आत्मा का परमात्मा से है। यदि इस मन के द्वारा कार्य करने वाली प्राण की साधारण क्रियाओं को हम अपने वश में कर लें, तो हम प्राण के भेद को भली भाँति सीख लेंगे। जो योगी इस भेद को भली भाँति जानता है, वह किसी भी शक्ति से नहीं डरता। क्योंकि उसे विश्व की प्रत्येक शक्ति पर पूर्ण अधिकार रहता है। प्राण रोकने की स्वाभाविक योग्यता ही व्यक्ति की शक्ति कही जाती है। हम जीवन में एक को दूसरे से अधिक सफल, प्रभावशाली तथा आकर्षक पाते हैं। वह सब इस प्राण शक्ति का ही फल है। इस प्रकार के आदमी भी प्रतिदिन उन्हीं शक्तियों का प्रयोग करते हैं, जिसका प्रयोग योगी लोग इच्छाशक्ति के द्वारा करते हैं। भेद केवल इतना ही है कि, योगी लोग अपनी क्रियाओं को पूर्ण रूप से जानते रहते हैं और साधारण लोग उन्हें नहीं जानते। जो लोग प्राण के महत्व को भली भाँति नहीं जानते, वे इसमें साधारण काम ले कर इसे अधिक मात्रा में नष्ट करते हैं। रुधिर के दौरान में, भोजन पचने में, शौच जाने में, वीर्य, पित्त, लार, कफ, मज्जा इत्यादि वस्तुओं के बनने में,

पलकों के खोलने तथा बन्द करने में, हमें प्राण ही की सहायता लेनी पड़ती है। प्राण हमें प्रतिक्षण टहलने, खेलने, दौड़ने, बातचीत करने, सोचने, बहस करने तथा किसी वस्तु की इच्छा करने में सहायता देता है।

सृष्टि के प्रलयकाल में भी यह प्राण सूक्ष्म रूप में पड़ा रहता है। प्रलय के बाद यह उठता है और आकाश में कार्य करना प्रारम्भ कर देता है। इसके फलस्वरूप अनेक रूपों का निर्माण होता है। पदार्थ और प्राण के सम्मिश्रण ही से ब्रह्माण्ड और पिण्ड बनते हैं।

प्राण ही रेलगाड़ी के इंजिन को घुमाता है, यही वाष्पयान को आगे चलाता है, यही वायुयान को वायु में चलने की शक्ति देता है, यही फेफड़ों में श्वास का प्रवेश कराता है। वास्तव में प्राण ही श्वास का जीवन है। मेरा विश्वास है कि अब आपको प्राण का पूर्ण ज्ञान हो गया होगा, जो प्रारम्भ में न रहा होगा।

श्वास की क्रिया को रोकने से हम अन्य शारीरिक गतियों को भी पूर्ण रूप से रोक सकते हैं। इस प्रकार श्वास अथवा प्राण को रोकने ही से हम शरीर के अङ्गों पर नियन्त्रण रख कर, उन्हें पूर्ण रूप से विकसित कर सकते हैं। इसी प्रकार मन और मस्तिष्क के ऊपर भी अधिकार किया जा सकता है। प्राणायाम के द्वारा ही हम अपने चरित्र और स्थितियों को अपने वश में रख कर, ब्रह्ममय जीवन का अनुभव कर सकते हैं।

इच्छाशक्ति के अधिकार में, विचारों के अनुसार श्वांस लेने से, तुम्हे एक प्रकार की अपूर्व शक्ति मिलेगी। इस शक्ति को तुम आत्मोन्नति के लिए प्रयोग कर सकते हो। तुम इस शक्ति की सहायता से अपने शरीर के असाध्य रोगों को दूर कर सकते हो और दूसरो के इसी प्रकार के दुखों को भी दूर कर सकते हो।

तुम अपने जीवन में इसका बड़ी सुगमता से प्रयोग कर सकते हो। इसका बुद्धिमानी से प्रयोग करो। ज्ञानदेव, तैलंग स्वामी, रामलिंग स्वामी प्रभृति पूर्वयोगियों ने प्राण नामक इस महत्वपूर्ण शक्ति का भिन्न भिन्न रूप से सदुपयोग किया था। प्राणायाम तथा अन्य श्वास सम्बन्धी व्यायामों को बढ़ा कर तुम भी वैसा ही कर सकते हो। तुम श्वास के समय अपने पास की वायु को अपने भीतर नहीं खींच रहे हो, परन्तु उसके स्थान पर प्राण धारण कर रहे। ध्यान को एकाग्र करके धीरे धीरे श्वास लो। फिर उसे भीतर उतनी ही देर तक रोको, जितनी देर तक उसे आसानी से रोक सकते हो। तब धीरे से ली हुई श्वास को बाहर निकाल दो। प्राणायाम करते समय किसी विशेष प्रकार का जोर तुम्हारे ऊपर न पड़े। श्वास की अदृश्य शक्तियों का अपने भीतर अनुभव करो। योगी बन कर अपने चारों ओर प्रसन्नता, प्रकाश और शक्ति का अनुभव करो।

हठ योगी प्राण तत्व को मानस-तत्व से बढ़ कर मानते हैं। उनका कहना है कि, सोते समय जब कि मस्तिष्क उपस्थित

नहीं रहता, प्राण उस समय भी मौजूद रहता है। इस प्रकार प्राण मस्तिष्क से अधिक कार्य करता है। हम कौशितकी और छान्दोग्योपनिषद में यह बात देखते हैं कि जहाँ प्राण, मस्तिष्क तथा अन्य इन्द्रियों की लड़ाई दिखलाई गई है वहाँ प्राण ही को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। प्राण के कार्य करने पर ही मन का जीवित रहना (सङ्कल्प) सम्भव है। और सङ्कल्प होने पर भी विचार भी उत्पन्न होते हैं। प्राण की सहायता ही से हम देखते, सुनते, बातचीत करते सोचते स्पर्श करते, समझते, इच्छा करते तथा जानते हैं। यही कारण है कि श्रुति ने प्राण के विषय में कहा है कि 'प्राण ही ब्रह्म है।"

प्राण का स्थान

अन्त करण ही प्राण का स्थान है। यद्यपि अन्त करण एक है फिर भी उसके भिन्न भिन्न कार्यों के अनुसार उसके चार रूप माने जाते हैं—(१) मानस, (२) बुद्धि, (३) चित्त और (४) अहकार। इसी प्रकार यद्यपि प्राण एक ही है, फिर भी इसके भिन्न भिन्न कार्यों के अनुसार इसके पाँच रूप माने जाते हैं —(१) प्राण, (२) अपान, (३) समान, (४) उदान और (५) व्यान। इसे वृत्ति-भेद कहते हैं। प्रधान प्राण को मुख्य प्राण कहते हैं। प्राण अहकार के साथ अन्त करण में रहता है। प्राण के पाँच भेदों में, प्राण और अपान मुख्य रूप से कार्य करते हैं। प्राण के रहने का स्थान अन्त करण और

अपान का गुदा है। उदान गले में रहता है तथा व्यान सम्पूर्ण शरीर में रहता है।

उप प्राण

नाग, कूर्म, क्रिकर देवदत्त तथा धनञ्जय पाँच उप प्राण हैं।

प्राण का कार्य

स्वास लेना ही प्राण का काम है, अपान मल निकालता है, समान भोजन पचाता है तथा उदान भोजन निगलने में सहायता करता है। यह जीव को सुलाता है। मृत्यु के समय यह सूक्ष्म (Astral) शरीर को स्थूल शरीर से अलग करता है। व्यान द्वारा शरीर में रुधिर दौड़ता है।

प्राणों का रंग

रुधिर की भाँति प्राणों का भी रंग मूँगे की भाँति लाल माना जाता है। अपान बीच में रहता है। अतः उसका रंग इन्द्रगोप कीड़े की भाँति सफेद या लाल होता है समान का रंग सफेद दूध अथवा तेल की तरह चमकीला होता है। व्यान का रंग रोशनी की किरणों से मिलता है। मृत्यु के समय जिस मनुष्य की साँस ब्रह्माण्ड फोड़ कर निकलती है, उसे फिर से जन्म नहीं लेना पड़ता।

श्वास तरङ्गों की लंबाई

साधारणतया श्वास अधिक से अधिक ६ फीट तक लंबी होती है। नाक से निकलने वाली साँस नौ इंच लंबी होती है। गाने के समय यही साँस एक फुट लंबी निकलने लगती है। भोजन के समय १५ इंच, सोते समय ॰॥ इंच, सम्भोग के समय ६७ इंच और शारीरिक व्यायाम के समय उससे भी अधिक लंबाई में साँस चलती है। साँस की लंबाई निकलते समय जितनी ही कम रहेगी उतना ही अधिक जीवन बढ़ेगा और जितनी ही अधिक निकलेगी उतना ही जीवन क्षीण होगा।

प्राण का केन्द्रीकरण

प्रातः और सायं दोनों सन्ध्याओं के समय प्राणायाम करते समय साँस को मस्तिष्क, नाभिमूल, नासिकाग्र और पैरों के अँगूठों में प्राणों को केन्द्रीकरण करने का ध्यान करते हुए पेट में साँस भरो। ऐसा करने से योगी सब तरह की थकावट और रोगों से मुक्त हो जाता है। नासिकाग्र पर प्राणों के केन्द्रित करने का ध्यान रखते हुए प्राणायाम करने से वायु तत्व पर अधिकार प्राप्त होता है। नाभिमूल पर प्राणों को केन्द्रित करने का ध्यान रखते हुए प्राणायाम करने से सब तरह के रोगों का नाश होता है और पैर के अँगूठों पर प्राणों को केन्द्रित करते हुए प्राणायाम करने से शरीर हलका होता है। जिह्वा से वायुपान करने वाले के सब रोग, थकावट और प्यास आदि नष्ट होते हैं। दोनों

सन्ध्याओं और प्रात काल के दो पहर के समय जो मुख से वायु का पान करते हैं, उनकी जिह्वा पर सरस्वती वास करती हैं। वह बृहस्पति के समान विद्वान और चतुर वक्ता हो जाता है। छ महीने में ऐसा मनुष्य सम्पूर्ण रोगों से मुक्त हो जाता है। जिह्वा से वायु पी कर जिह्वामूल में वायु को यथाशक्ति रोक रखना चाहिए और नासिका छिद्रों से निकाल देना चाहिए। इस तरह अमृतपान करने वाला मनुष्य सब प्रकार से समृद्धिशाली रहता है।

फेफड़े

यहाँ पर फँफड़ो और उनके कामों का कुछ वर्णन करना अनावश्यक न होगा। हमारा श्वास लेने का यन्त्र दो फँफड़ों में बँटा है, जो छाती के भीतर दोनों तरफ हैं और उन दोनों को आगे जोड़ती हुई श्वासनलिका नासिका तक चली गयी है। दोनों फँफड़ों के बीच में हृदय है, जहाँ रक्त आ कर जमा होता है और उसीके पास बड़ी बड़ी श्वास नाड़ियाँ हैं। फँफड़े स्पंज की तरह बने हुए हैं, जिनमें अगणित छिद्र हैं और उसके रेशे बहुत लचीले होते हैं। फँफड़ों में साँस भरने की अगणित छोटी छोटी थैलियाँ हैं। मुर्दे की चीड़फाड़ के बाद जब फँफड़े शरीर में से निकाले जाते है, तब पानी के बर्तन में डालने से फँफड़े उतराने लगते हैं फँफड़ों के ऊपर प्लूरा नामक झिल्ली चिपकी रहती है, जो बड़ी चिपकनी होती है और जिसके कारण माँस

श्वास तरङ्गों की लंबाई

साधारणतया श्वास अधिक से अधिक ६ फीट तक लंबी होती है। नाक से निकलने वाली साँस नौ इंच लंबी होती है। गाने के समय यही साँस एक फुट लंबी निकलने लगती है। भोजन के समय १५ इंच, सोते समय ॥ इंच, सम्भोग के समय ७ इंच और शारीरिक व्यायाम के समय उससे भी अधिक लंबाई में साँस चलती है। साँस की लंबाई निकलते समय जितनी ही कम रहेगी उतना ही अधिक जीवन बढ़ेगा और जितनी ही अधिक निकलेगी उतना ही जीवन क्षीण होगा।

प्राण का केन्द्रीकरण

प्रात और सायं दोनों सन्ध्याओं के समय प्राणायाम करते समय साँस को मस्तिष्क, नाभिमूल, नासिकाग्र और पैरों के अंगूठों में प्राणों को केन्द्रीकरण करने का ध्यान करते हुए पेट में साँस भरो। ऐसा करने से योगी सब तरह की थकावट और रोगों से मुक्त हो जाता है। नासिकाग्र पर प्राणों के केन्द्रित करने का ध्यान रखते हुए प्राणायाम करने से वायु तत्व पर अधिकार प्राप्त होता है। नाभिमूल पर प्राणों को केन्द्रित करने का ध्यान रखते हुए प्राणायाम करने से सब तरह के रोगों का नाश होता है और पैर के अँगूठों पर प्राणों को केन्द्रित करते हुए प्राणायाम करने से शरीर हलका होता है। जिह्वा से वायुपान करने वाले के सब रोग, थकावट और श्वास आदि नष्ट होते हैं। दोनों

सन्ध्याओं और प्रातःकाल के दो पहर के समय जो मुख से वायु का पान करते हैं, उनकी जिह्वा पर सरस्वती वास करती है। वह बृहस्पति के समान विद्वान और चतुर वक्ता हो जाता है। छः महीने में ऐसा मनुष्य सम्पूर्ण रोगों से मुक्त हो जाता है। जिह्वा से वायु पी कर जिह्वामूल में वायु को यथाशक्ति रोक रखना चाहिए और नासिका छिद्रों से निकाल देना चाहिए। इस तरह अमृतपान करने वाला मनुष्य सब प्रकार से समृद्धिशाली रहता है।

फेफड़े

यहाँ पर फेंफड़ों और उनके कामों का कुछ वर्णन करना अनावश्यक न होगा। हमारा श्वास लेने का यन्त्र दो फेंफड़ों में बँटा है, जो छाती के भीतर दोनों तरफ हैं और उन दोनों को आगे जोड़ती हुई श्वासनलिका नासिका तक चली गयी है। दोनों फेंफड़ों के बीच में हृदय है, जहाँ रक्त आ कर जमा होता है और उसीके पास बड़ी बड़ी श्वास नाड़ियाँ हैं। फेंफड़े स्पंज की तरह बने हुए हैं, जिनमें अगणित छिद्र हैं और उसके रेशे बहुत लचीले होते हैं। फेंफड़ों में साँस भरने की अगणित छोटी छोटी थैलियाँ हैं। मुर्दे की चीड़फाड़ के बाद जब फेंफड़े शरीर में से निकाले जाते हैं, तब पानी के बर्तन में डालने से फेंफड़े उतराने लगते हैं फेंफड़ों के ऊपर प्लूरा नामक झिल्ली चिपकी रहती है, जो बड़ी चिपकनी होती है और जिसके कारण साँस

१ ऐपीग्लोटिस, २ कार्टिलेज ३ ट्रेशिया ४ जगुलर वीन, ५ बाएँ फेफडे की ऊपरी झिल्ली, ७ हृदय ८ मध्य झिल्ली, ९ ब्राशियल (सांस की नाड़ियाँ, १० दाहिनी नाडी ११ बाँई नाड़ी १२ वाम स्नायु १३ दक्षिण स्नायु ।

लों समय दोनों फफड़ों का सम्पर्क नहीं होता। एक ओर तो प्लूरा फफड़ों से चिपकी रहती है और दूसरी ओर उसका लगाव छाती से रहता है। इस तरह प्लूरा झिल्ली फफड़ों को छाती के सहारे स्थित रखती है। दाहिना फफड़ा तीन भागों में विभक्त है और बायें फफड़े में केवल दो ही भाग होते हैं। साँस लेने के समय फफड़ों के पहले वायुप्रवाह अधम मांसपेशियों की ओर, जो गले के ऊपरी हिस्से को उदर से विभाजित करती हैं, फैलते हैं। फफड़ों का आधार उदरमूल के पास स्थित है। निमोनिया में यही अङ्ग गरम हो कर सूज उठता है। आक्सीजन की पर्याप्त मात्रा न पाने ही से यक्ष्मा नामक रोग में apex अर्थात् फैफड़ों का आधारस्थल ही रोगी हो जाता है। ऐसी अवस्था ही में बसिलो नामक रोगकीटाणु यहीं पैदा हो कर शरीर में फैलने लगते हैं। कपालभाती और भस्त्रिका प्राणायामों के अभ्यास से ली गयी गहरी साँसों द्वारा फैफड़ों के आधार अङ्गों apices को पर्याप्त ऑक्सीजन मिलता है, जिससे थाइसिस रोग नष्ट हो जाता है। प्राणायाम के अभ्यास से फफड़े पुष्ट होते हैं। प्राणायाम का अभ्यास करने वालों का स्वर गम्भीर, मधुर तथा आकर्षक होता है।

श्वास मार्ग में नासिका का आभ्यन्तरिक भाग pharynx अर्थात् कण्ठ, larynx अर्थात् श्वास या स्वरयन्त्र जिसमें स्वरोत्पादक दो स्नायु और श्वास नाड़ियाँ होती हैं, दाहिनी ओर बाईं bronchii और, छोटे छोटे bronchial tubes होते हैं।
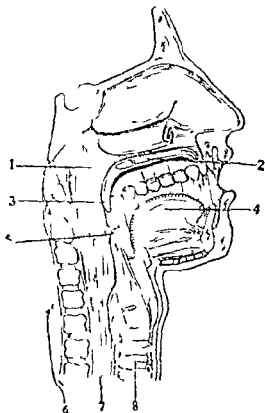
१ फेरिक्स (Pharynx) का नासिका भाग २ कड़ा तालू (Palate) ३ नरम तालू ४ जीभ ५ ऐपीग्लाटिस (Epiglotis) ६ वर्टीबा (Vertebrea) ७ गलैट या एसोफागस (Gleat or Esophagus) ८ टैरिया या लारिक्स (Trachea or Larynx)

जब हम साँस लेते हैं तो साँस नाक में हो कर आती है, जो कंठ और श्वास तथा स्वरयन्त्रों में होती हुई दाहिने बाएं bronchial tubes जो अगणित bronchioles नामक छोटी छोटी नाड़ियों में विभक्त होते हैं, होती हुई फैफड़ों की लाखों छोटी छोटी थैलियों में भर जाती हैं। फैफड़ों की थैलियाँ यदि समतल पृथ्वी पर फैलाई जावें, तो १,४०००० वर्ग फीट में फैल जावेंगी।

डायफ्राम को गति ही से फैफड़ों में साँस पहुँचती है। डायफ्राम के फैलने से छाती और फैफड़े भी फैलते हैं। इन दोनों के फैलने से जो रिक्त स्थान प्रकट होता है, वहीं बाहरी हवा जोरों से घुस आती है। डायफ्राम के आकुंचन के साथ ही छाती और फैफड़े भी सिकुड़ जाते हैं और फैफड़ों से हवा निकल जाती है।

Larynx अर्थात श्वास स्वर यन्त्र में स्थित स्वर स्नायुओं से शब्द की उत्पत्ति होती है। स्वरयन्त्र ही को अंग्रेजी में Larynx कहते हैं। जब बहुत गाने या व्याख्यान देने से स्वर स्नायुओं पर अधिक जोर पड़ता है, तब गला पड़ जाता है और आवाज भर्राई सी निकलती है। स्त्रियों के स्वर स्नायु छोटे होते हैं। इसीलिए उनका स्वर मधुर होता है। साधारणतया एक मिनट में सोलह बार साँस ली जाती है। निमोनिया के रोगियों में यही साँस की गति बढ़ कर एक मिनट में ६०, ७०, ८० तक पहुँचती है। दमा वालों के Bronchial tubes अर्थात श्वास नालिकाएँ बहुत अटक अटक कर काम करती हैं। प्राणायाम करने से श्वास नलिकाओं के रुक रुक कर काम करने का दोष दूर हो जाता है :—

श्वास स्वर यन्त्र का ऊपरी भाग एक चिकने टोपी के आकार की झिल्ली से ढँका रहता है। इसे अंग्रेजी में Epiglottis कहते हैं। यह झिल्ली भोजन के कणों और जल को श्वास नली के यन्त्रों में नहीं जाने देती और उनकी रक्षा करती रहती है। इस टोपी के आकार की झिल्ली का काम safety valve की तरह श्वास यन्त्र का पहरा देना है।

जैसे ही संयोगवश कोई अन्न का कण श्वास यन्त्र में प्रवेश करने का प्रयत्न करता है वैसे ही खाँसी आ जाती है और उस अन्न के कण को बाहर निकाल फेंकती है।

फेफड़े रक्त को शुद्ध किया करते हैं। धमनियों में बहने के लिए जो रक्त हृदय से निकलता है, वह जीवनी शक्ति से पूर्ण होता है। वही रक्त फिर जब लौट कर हृदय में आता है तब शरीर के मैल से भरा हुआ नीला पड़ जाता है। धमनियाँ वे नाड़ियाँ हैं जिनमें होकर हृदय से निकला हुआ आक्सजन पूर्ण गहरा लाल रक्त सारे शरीर में फैलता है। स्नायु वे नाड़ियाँ हैं जिनमें होकर शरीर का मल लेते हुए रक्त हृदय को वापस लौटता है। हृदय के दाहिने भाग में अशुद्ध ज़हरीला रक्त आ कर जमा होता है। हृदय के इसी दाहिने भाग से फेफड़ों में जा कर रक्त की शुद्धि होती है। फेफड़ों की अगणित थैलियों में रक्त चला जाता है। साँस लेते ही फेफड़ों की अगणित थैलियों (pulmonary capillaries) में स्थित दूषित रक्त के साथ आक्सजन का सम्पर्क होता है। इन capillaries की दिवालें मलमल की

तरह पतली होती हैं इन्हीं में होकर रक्त चूने लगता है। इन्हीं महीन capillaries में ओषजन प्रविष्ट हो जाता है। इन रेशों के साथ ओषजन का सम्पर्क होते ही एक तरह का संघर्ष (combustion) उत्पन्न होता है।

रक्त में ओषजन प्रविष्ट हो जाता है और रक्त का दूषण जिसे carbonic acid gas कहते हैं और जो शरीर के मल तथा विष से उत्पन्न होता है, जिसे रक्त सारे शरीर में से अपने साथ बटोर कर हृदय के दाहिने भाग तक लाता है साँस की हवा में मिलकर बाहर चला जाता है। इस तरह शोधन किया हुआ ओषजन से पूर्ण रक्त चार Pulmonary नामक स्नायुओं द्वारा बाएँ (Auricle) हृदय कोष में पहुँचता है और फिर बाँयें Ventricle नामक हृदय के भाग में पहुँचता है। Ventricle नामक हृदय के कोष से वही विशुद्ध रक्त Aorta नामक विशाल धमनी में प्रविष्ट हो कर शरीर में विचरने लगता है। Aorta से होता हुआ यह शरीर की अन्य बहुत सी धमनियों में चला जाता है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि दिन भर में ३५००० pints रक्त फेफड़ों की Capillaries थैलियों में शुद्ध किया जाता है।

धमनियों में होकर शुद्ध रक्त महीन Capillaries में पहुँचता है। Capillaries में से रिसता हुआ रक्त शरीर के रेशे रेशे को पुष्ट करता है। रेशे अपना आकुंचन और प्रसारण अलग स्वतन्त्र रूप से किया करते हैं। रेशे रक्त से ओषजन लेकर

Carbon di Oxide रक्त में छोड़ देते हैं। शरीर के इन्हीं सब दूषणों को बटोर कर नीली नसों से होकर रक्त हृदय के दक्षिण कोष में पहुँचता है।

इस आश्चर्यपूर्ण सुकुमार ढाँचे का बनाने वाला कौन है ? इन अङ्गों की आड़ में क्या तुम्हें ईश्वर के सर्वशक्तिशाली हाथों का अनुभव नहीं होता ? इस शरीर की बनावट निस्सन्देह ईश्वर की सर्वव्यापिनी शक्ति का प्रमाण दे रही है। हमारे हृदयवासी अन्तर्यामी भगवान इस आभ्यन्तरिक फैक्टरी के स्रष्टा का काम करते हैं। उनके अस्तित्व के बिना हृदय, शुद्ध रक्त कभी भी धमनियों में नहीं फेंक सकता, फेफड़े रक्तशोधन का काम कभी नहीं कर सकते। चुपचाप उन्हीं भगवान की प्रार्थना करके उनका गुणानुवाद गाओ। सदा उनका ध्यान करो। सारे शरीर में उनके अस्तित्व का अनुभव करो।

इड़ा और पिङ्गला

मेरुदण्ड के दोनों तरफ एक एक स्नायु प्रणाली है। बाँयी स्नायु प्रणाली को इड़ा और दाहिनी को पिङ्गला कहते हैं। ये नाड़ियाँ हैं। इन्हींको अंग्रेजी में दाहिनी और बाईं Sympathetic chords कहते हैं। वास्तव में ये प्राणवाहक सूक्ष्म नाड़ियाँ हैं। इड़ा में चन्द्र का और पिङ्गला में सूर्य का वास है। इड़ा शीतल है और पिङ्गला उष्ण है। इड़ा नासिका के वाम रन्ध्र से और पिङ्गला दक्षिण रन्ध्रसे चलती है। घंटे घंटे
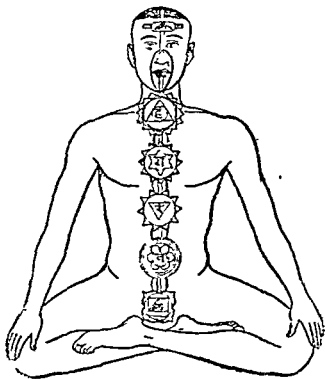
इड़ा और पिङ्गला

भर के अन्तर मे दहिना और बाँयाँ स्वर बदला करता है। जब इडा और पिङ्गला चलती हैं तो मनुष्य सांसारिक कामो मे लगा रहता है। सुषुम्ना के चलते ही वह ससार से विमुख हो जाता है और उसे समाधि लग जाती है। योगीजन सदा प्राण को सुषुम्ना नाड़ी में, जिसे ब्रह्मनाड़ी भी कहते हैं, चलाने का प्रयत्न करते हैं।

सुषुम्ना नाड़ी के दहिने तरफ पिङ्गला और बाँयी तरफ इड़ा नाड़ियाँ स्थित हैं। चन्द्र की प्रकृति तामस और सूर्य की राजस है। सूर्य के भाग मे विष और चन्द्र के भाग मे अमृत पड़ा है। इड़ा और पिङ्गला से समय का ज्ञान होता है। सुषुम्ना काल (समय) को उदरस्थ करती है।

सुषुम्ना

नाड़ीमण्डल मे सुषुम्ना सब से महत्वपूर्ण नाड़ी है। सारा ब्रह्माण्ड इसी पर स्थित है और यही मोक्ष का मार्ग है। गुदा मार्ग के पिछले भाग मे यह स्थित है और मेरुदण्ड से लगी हुई यह गुप्त रूप से शिर मे स्थित ब्रह्मरन्ध्र तक चली गयी है। जब सुषुम्ना जागरित हो जाती है तभी योगी का असल काम होने लगता है। सुषुम्ना नाड़ी मेरुदण्ड के मध्य भाग मे होती हुई ऊपर की तरफ चली गयी है। उपस्थ और नाभि के बीच मे अण्डाकार एक कन्द है। उसी कन्द से शरीर की ७२००० नाड़ियाँ उत्पन्न हो कर सारे शरीर में फैल गयी हैं। इनमें से ७२

नाडियाँ साधारणतया सभी का ज्ञान है। इनमे भी दस नाडियाँ मुख्य हैं जो सारे शरीर मे प्राण का सञ्चार करती हैं। इन दस के नाम इडा, पिङ्गला, सुषुम्ना गान्धारी, हस्तिजिह्वा, पूषा, यशस्विनी, अलम्बुषा कुहू और शङ्खिनी हैं। इस नाडीचक्र का जानना योगी के लिए बहुत आवश्यक है। इडा, पिङ्गला और सुषुम्ना प्राणवाहक नाडियाँ हैं और चन्द्रमा सूर्य और अग्नि क्रम से उनके देवता हैं। जब सुषुम्ना नाडी चले तब ध्यान करने के लिए बैठ जाना चाहिए। उस समय ध्यान अच्छा लगेगा। सुषुम्ना नाडी चलते समय ध्यान का अभ्यास करते करते कुण्डलिनी जाग्रत हो जाती है और सुषुम्ना नाडी में होती हुई चक्र-भेदन करते करते ऊपर चढ़ने लगती है। उस समय योगी को अनेक प्रकार के अनुभव, शक्तियाँ और आनन्द प्राप्त होने लगते हैं।

कुण्डलिनी

कुण्डलिनी आत्मा की सर्पाकार शक्ति है जो अधोमुख किये हुए, मेरुदण्ड के पेंदे में मूलाधार चक्र में स्थित है। कुण्डलिनी को बिना जाग्रत किये समाधि नहीं लग सकती। प्राणायाम में कुम्भक करने से शरीर मे उष्णता उत्पन्न होती है, जिससे कुण्डलिनी जाग्रत होकर सुषुम्ना नाडी में होती हुई ऊपर चढ़ने लगती है। धीरे धीरे कुण्डलिनी छहों चक्रों को भेदती हुई कपाल स्थित सहस्रार मे वास करने वाले श्री हरि से मिल जाती है।
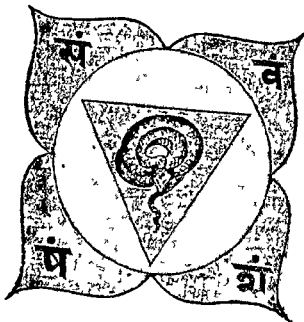
कुडलिनी

।

इसी समय योगी का निर्विकल्प समाधि लगती है और इस समय वह मुक्तावस्था में रहता है और दैवी ऐश्वर्यों का भोग करता है। मन को एकाग्र कर के प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिये। मणिपूरक चक्र तक चढ़ी हुई कुण्डलिनी फिर गिर कर मूलाधार चक्र में आ जाती है। इसको फिर उठाने का यत्न करना चाहिए। कुण्डलिनी जाग्रत करते समय निष्काम भाव से और वैराग्य भाव धारण करके प्रयत्न करना चाहिए। कुण्डलिनी सूत की तरह पतली होती है और जगाने से डंडा मारे हुए सर्प की तरह फुफकार कर सुषुम्ना रूपी बिल में घुस जाती है। जब यह एक के बाद दूसरा चक्र भेदन करती हुई आगे को बढ़ती है तब मस्तिष्क की तह धीरे धीरे खुलती जाती हैं और योगी को अनेक तरह की सिद्धियाँ मिलती जाती हैं।

षट्चक्र

चक्र आध्यात्मिक शक्तियों के केन्द्र हैं। उनकी स्थिति सूक्ष्म शरीर में है, किन्तु स्थूल शरीर में भी उनके आकार हैं। चर्म चक्षु से ये चक्र नहीं देखे जा सकते। स्थूल शरीर के स्नायु केन्द्रों Plexuses से उनकी समानता की जा सकती है। शरीर में छः महत्वपूर्ण चक्र होते हैं। छः चक्रों के नाम क्रम से निम्न लिखित हैं—

मूलाधार चक्र (इस चक्र में चार पखड़ियाँ होती हैं) गुदा के पास है। स्वाधिष्ठान चक्र (इस चक्र में ६ पखड़ियाँ होती

हैं) जननेन्द्रिय के ऊपर है । मणिपूरक चक्र (इसमें दस पखड़ियाँ होती हैं) नाभि में है । अनाहत चक्र (इसमें १२ पखड़ियाँ होती हैं) हृदय में है । विशुद्ध चक्र (इसमें सोलह पखड़ियाँ होती हैं) कंठ में है । आज्ञा चक्र (इसमें दो पखड़ियाँ होती हैं) दोनों भौंहों के बीच में है । सातवें चक्र का नाम है सहस्रार जिसमें एक हजार पखड़ियाँ होती हैं । यह चक्र खोपड़ी के अन्दर चोटी के पास होता है । अंग्रेजी में मूलाधार को Sacral, स्वाधिष्ठान को Prostatic, मणिपूरक को Solar, अनाहत को Cardiac, विशुद्ध को Laryngal और आज्ञा चक्र को Cavernous कहते हैं ।

नाड़ियाँ

प्राण वहन करने वाली छोटी छोटी सूक्ष्म नलियों को नाड़ियाँ कहते हैं । वे केवल सूक्ष्म दृष्टि से देखी जा सकती हैं । स्नायुओं से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है । उनकी संख्या ७२००० है । उन सब में इड़ा पिङ्गला और सुषुम्ना मुख्य हैं । इन तीनों में भी सुषुम्ना सब से महत्वपूर्ण है ।

नाड़ी-शुद्धि

प्राण और अपान वायुओं के एकीकरण करने की क्रिया का ही नाम प्राणायाम है । प्राणायाम तीन भिन्न कर्मों में विभक्त है । यथा पूरक—साँस लेना, रेचक—साँस छोड़ना और कुम्भक अर्थात साँस रोकना । प्राणायाम के ये तीन अङ्ग

प्रणव के तीनों अक्षरों से मेल खाते हैं। अत प्रणव ही को प्राणायाम कहा गया है। पद्मासन पर बैठकर अभ्यास करने वाले को नासाग्र पर देवी गायत्री का, जिनका मुख लाल है और जिनकी प्रभा कोटि चन्द्रमाओं के समान है, गदा लिये, हस पर सवार हैं, ध्यान करना चाहिये। ओंकार के अकार की गायत्री देवी साक्षात प्रतिमा हैं। ओंकार का उ सावित्री देवी का रूप है जो गौर वर्ण की बालिका के रूप में चक्र धारण किये गरुड पर सवार हैं। ओंकार का म सरस्वती का रूप है जो श्याम वर्ण की प्रौढा स्त्री के रूप मे हैं। उनके हाथ मे त्रिशूल है और व साँड पर आरूढ हैं। अभ्यास करने वाला पूर्ण ओंकार का जो सर्व-श्रेष्ठ प्रभा वाला और तीनों आ+उ+म से युक्त है, ध्यान करे। १६ मात्रा काल जिसमे लगे इतने समय मे इडा अर्थात वाम नासा रन्ध्र स श्वास खीच और ओंकार के अकार का ध्यान करे। ६४ मात्रा के काल पर्यन्त उस साँस को रोक कर आकार के उकार का ध्यान कर और ओंकार के मकार का ध्यान करता हुआ ३२ मात्रा काल पर्यन्त रोकी हुई साँस को धीरे धीरे दहिने नासा रन्ध्र स निकाल दे। साँस लेने की क्रिया को पूरक, रोकने को कुम्भक और छोडने को रेचक कहते हैं। इस तरह यथाशक्ति कई बार प्राणायाम करना चाहिए।

एक आसन पर बैठने का जब पूरा अभ्यास हो जाय, और जब पूरी एकाग्रता आ जाय, तब सुषुम्ना का मल हटाने के लिए योगी को पद्मासन पर बैठ कर, वाम नासिका से श्वास खींच कर

यथाशक्ति अधिक से अधिक समय तक उसे रोक कर दाहिने नासा रन्ध्र से साँस को निकाल देना चाहिए। इसके बाद दाहिने नासा रन्ध्र से श्वास खींच कर यथाशक्ति रोक कर बाएँ से निकाल दे। इसके बाद फिर जिस रन्ध्र से रेचक किया हो उसीसे पूरक करे। इसी सम्बन्ध में संस्कृत के ग्रन्थ में एक श्लोक है, जिसका अर्थ है कि "आरम्भ में नियमानुसार वाम नासा रन्ध्र से पूरक करके यथाशक्ति कुम्भक करे। फिर दक्षिण नासा रन्ध्र में रेचक कर दे। फिर दक्षिण नासा रन्ध्र से पूरक करने के बाद कुम्भक करके वाम नासा रन्ध्रसे रेचक द्वारा श्वास धीरे धीरे निकाल देना चाहिए"। उक्त नियमानुसार जो लोग क्रम से वाम और दक्षिण नासा रन्ध्रों से प्राणायाम करते हैं उनकी नाडियाँ तीन महीने के अभ्यास से शुद्ध हो जाती हैं। इस प्रकार के प्राणायाम का अभ्यास प्रातःकाल सूर्योदय के समय, मध्यान्ह (ठीक १२ बजे दोपहर) काल में, सूर्यास्त के समय सन्ध्या में और अर्ध रात्रि के समय प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। अभ्यास धीरे धीरे बढ़ा कर ८० प्राणायाम प्रति दिन के हिसाब से बढाकर चार सप्ताह तक करना चाहिए। आरम्भावस्था मे शरीर से पसीना निकलने लगता है, प्राणायाम करते करते जब शरीर-कम्प होने लगे तब उसे मध्यमावस्था कहते है। अन्तिम अवस्था वह है, जिसमे प्राणायाम करते करते शरीर जमीन से उठ कर अधर मे ठहरने लगता है। पद्मासन पर बैठ कर प्राणायाम का अभ्यास करने ही मे मनुष्य इस अवस्था को प्राप्त होता है। प्राणायाम करने में जब पसीना

निकलने लगे, तब अभ्यास करने वाले को अपना शरीर खूब रगडना चाहिए। ऐसा करने से शरीर हलका और बलवान होता है। अभ्यास की प्रारम्भावस्था मे घी और दूध भोजन मे विशेष रूप से खाना चाहिए। उपरोक्त नियमो के अनुसार आचरण करने वाले के शरीर का ताप अर्थात प्राणायाम से उत्पन्न गर्मी, शरीर को कष्ट नही पहुँचाती। जैसे धीरे धीरे हाथी, शेर जैसे हिंस्र पशु पालतू हो कर मनुष्य के वश मे आ जाते है वैसे ही अभ्यास करने से श्वास के ऊपर भी अभ्यास करने वाले का, अधिकार हो जाता है।

प्राणायाम के अभ्यास से नाडियाँ शुद्ध हो जाती है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है, अन्तर्नाद स्पष्ट सुनाई देने लगता है और स्वास्थ्य बहुत अच्छा हो जाता है। जब प्राणायाम के निरन्तर अभ्यास से नाडी चक्र शुद्ध हो जाते है तब धीरे धीरे मध्य मे स्थित सुषुम्ना नाडी मे भी श्वास प्रवेश करने लगता है। कुम्भक के समय गर्दन की ओर गुदा की मास पेशियों के आकुचन करने से प्राणवायु सुषुम्ना मे, जो इडा और पिङ्गला नाडियो के मध्य मे स्थित है, प्रवेश करने लगता है। प्राणवायु जो क्रम से इडा और पिङ्गला मे चला करता है, वह कुम्भक के अभ्यास से मध्य-स्थित सुषुम्ना नाडी मे, नाभि के समीप, सरस्वती नाडी की सहायता से, प्रवेश कर जाता है। इस नाडी मे प्रवेश करते ही योगी ससार के लिए मृतप्राय हो कर उस अवस्था को प्राप्त करता है जिसे समाधि कहते है। अपान वायु को ऊपर खीचने और प्राण

वायु को गले के बल से नीचे दबाने का अभ्यास करते करते योगी जरावस्था से मुक्त हो कर, सोलह वर्ष का युवा हो जाता है। जो राजरोग हामियोपैथिक, एलोपैथिक और आयुर्वेदिक आदि किसी चिकित्सा से अच्छे नहीं होते वे प्राणायाम के अभ्यास से जड़ से अच्छे हो जाते है।

नाडियों के शुद्ध होते ही योगी के शरीर पर विशेष चिन्ह प्रकट होने लगते है। शरीर का हल्का होना, चेहरे पर तेज का बढना, जठराग्नि प्रदीप्त होना, शरीर दुबला होना, शरीर में सुस्ती का नष्ट होना आदि नाडीशुद्धि के लक्षण है।

षट् कर्म

अर्थात् नाड़ी शुद्धि के छः प्रधान उपाय

ये छः कर्म केवल उन्हीं लोगों के लिए हैं जिनका शरीर बहुत स्थूल है। प्राणायाम के अभ्यास की तैयारी के लिए उन्हीं लोगों को इन छः कर्मो का अभ्यास करना चाहिए। इन छः कर्मों के करने के बाद प्राणायाम का अभ्यास करने से सफलता शीघ्र मिलती है। इन छः कर्मों के नाम हैं (१) धौती (२) वस्ती (३) नेती (४) त्राटक (५) नौली और (६) कपालभाती।

(१) धौती

चार अगुल चौड़ा और १५ फीट लम्बा एक साफ मलमल का कपडा लो। इस कपडे की कोरें चारो तरफ से बहुत अच्छी

सिली होनी चाहिये जिससे फालतू तागे इधर उधर न लटकते हों। इस कपडे को गुनगुने पानी में भिगो लो। अब धीरे धीरे इस कपडे को पूरा चना कर पेट के अन्दर ले जाओ फिर धीरे धीरे कपडे को वाहर निकाल लो। पहिले दिन ही पूरा कपडा पेट के अन्दर जाना असम्भव है। पहले दिन फुट भर ले जाओ फिर धीरे धीरे बढ़ाओ। इस क्रिया को वस्त्र धौती कहते हैं। इसके करने से आरम्भ मे उवकाई आती है। दो तीन दिन के अभ्यास के बाद यह रुक जाती है। वस्त्र धौती के अभ्यास से गुल्म उदर के रोग जैसे कुपच, पित्त की कै, कफ, ज्वर, लनैगो, दमा, सीहा (तिल्ली), कुष्ट, चमडे के अन्य रोग कफ और पित्त मे उत्पन्न होने वाले राग, अच्छे हो जाते हैं। इस क्रिया का रोज न भी अभ्यास करे तो कोई हानि नही है। सप्ताह या पक्ष में एक दिन इसका अभ्यास करना यथेष्ट है। कपडे को सावुन के धो कर, विल्कुल साफ रखना चाहिए। वस्त्र-धौती करने के बाद ही, एक प्याला दूध पी लेना चाहिये। दूध न पीने से अन्दर बडी खुश्की मालूम होगी।

वस्ती

इस क्रिया का अभ्यास बाँस की पुल्ली या बिना पुल्ली के भी हो सकता है। किन्तु पुल्ली का होना अधिक अच्छा है। एक टब में नाभि तक जल में उत्कटासन पर बैठो। इस तरह बैठने में सारे शरीर का बोझ पैरों के पञ्जों पर रहेगा और एड़ियों पर चूतड रहेंगे। छ अगुल लम्बी बाँस की पुल्ली ले लो।

वस्ती
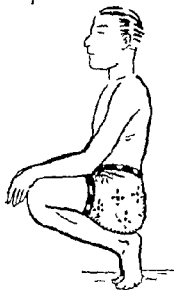
इस पुल्ली पर वैसलीन, रेंडी का तेल या साबुन लगा कर गुदा के अन्दर चार अंगुल डालो। तब गुदा को सिकोड़ो। धीरे २ गुदा की राह जल पुल्ली में हो कर आँतों में जाने लगेगा। अन्दर पहुँच जाने पर पेट को खूब हिलाओ तब पानी को बाहर निकाल दो इसी का नाम जलबस्ती है।

इसके अभ्यास से प्लीहा, मूत्र रोग, गुल्म, Myalgia जलोदर, पाचन सम्बन्धी विकार, तिल्ली और आँतों के रोग, वायु, पित्त और कफ के विकार नष्ट हो जाते हैं। इस क्रिया को सवेरे खाली पेट करना चाहिए। यह क्रिया करने के बाद एक प्याला दूध पी लो, या कुछ भोजन कर लो। यह क्रिया नदी में खड़े खड़े व उत्कटासन से हो सकती है।

बिना पानी के भी बस्ती करने का एक और उपाय है। इसको स्थल बस्ती कहते हैं। पश्चिमोत्तान आसन पर बैठ कर पेड़ू और आँतों को नीचे की तरफ मथो। पेड़ू की मांस पेशियों का खूब सिकोड़ो। इससे बद्धकोष्ठता और अन्त्र आमाशय के रोग अच्छे होने लगते हैं। किन्तु जल बस्ती ही अधिक लाभदायक है।

नेती

१२ अंगुल लम्बी डोरी लो जिसमें गाँठ न हो। इसको नाक के एक एक छेद में क्रम से डाल कर, मुख से निकालो। अभ्यास करते करते नाक के एक छेद में डाला हुआ डोरा दूसरे

छेद से भी निकाला जा सकता है। डोरी कडी हो जाने पर सरलता से अपना काम करने लगती है। इस क्रिया के करने से ललाट शुद्ध हो जाता है और दृष्टि तीव्र हो जाती है। Whin tis और Coryza गेम रोग नेती के अभ्यास से अच्छे हो जाते हैं।

त्राटक

बिना पलक गिराए किसी छोटी सी चीज को एकाग्र चित्त तक देखते रहो, जब तक आँखो में से आँसू न गिरने लगें। इस अभ्यास से आँखों के सब रोग अच्छे हो जाते हैं। मन की चचलता नष्ट हो कर शाम्भवी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। इच्छा शक्ति बढती है और क्लेअरवायस Clairvoyance नामक शक्ति स्वय उत्पन्न हो जाती है।

नौली.

पेड़ू की मांसपेशियो की सहायता से उदर को मथने का नाम नौली है। सिर को नीचे झुकाओ। पेट को अन्दर खीचो और चित्र के अनुसार पेट को दाहिने बाँएँ चालन करो। इस तरह पेट की मांस पेशियों को चलाने से बद्धकोष्टता दूर होती है और आँतो के सब रोग नष्ट होते हैं।

कपालभाती

लुहार की धौकनी की तरह शीघ्रता से रेचक और पूरक करो। कफ जन्य विकारों का इस क्रिया के अभ्यास से नाश होता है। इस क्रिया का खुलासा आगे किया जायगा।
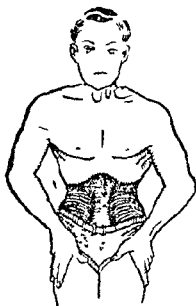
नौली

द्वितीय अध्याय

ध्यान करने के लिए कमरा

जिस कमरे में ध्यान किया जाय, वह और कमरों से अलग ताले में बन्द रहना चाहिए। इस कमरे में किसी भी व्यक्ति को प्रवेश न करने दे। सदा शुद्ध एवं स्वच्छ रक्खे। सम्भवतः यदि प्राणायाम एवं ध्यानादि क्रियाओं के लिए कोई खास कमरे का प्रबन्ध न कर सकें, तो किसी भी कमरे में एक अलग शान्त स्थान की नियुक्ति अवश्य कर लो और वह स्थान खास इसी अभिप्राय के लिए व्यवहार में लाया जाय। अपने आसन के सन्मुख अपने इष्टदेव अथवा गुरु का चित्र रखना चाहिये। ध्यान एवं प्राणायाम करने के पहिले उस चित्र में स्थित अपने गुरु या इष्टदेव की शारीरिक और मानसिक पूजा करनी चाहिए। इस कमरे में सुगन्धित वस्तु अथवा अगर बत्ती जलाकर वायु शुद्ध कर लेना आवश्यक है। नित्य पाठ के लिए रामायण, भागवत, गीता, उपनिषद, योगवाशिष्ट आदि धार्मिक पुस्तकें रखी रहनी चाहिए। बैठने के स्थान पर एक कम्बल चौपरत कर उसके ऊपर एक सफेद मुलायम कपड़ा बिछा दे। यही आसन का काम दे सकेगा। यदि हो सके तो कुशासन बिछाओ और उस पर मृग अथवा व्याघ्र का चर्म बिछा दो। इसी आसन पर ध्यान और प्राणायाम के अभ्यासार्थ बैठो। सीमेंट से बना हुआ एक चबू-तरा भी व्यवहार में ला सकते हो इससे कीड़ों, मकोड़ों अथवा

चींटियों आदि से रक्षा रहेगी। जब आसन पर बैठो तब अपने शिर, गर्दन एव शरीर को बिलकुल सीधा रक्खो। ऐसा करने से मेरुदण्ड स्वच्छ रह सकेगा।

प्राणायाम के लिए पॉच वस्तुओं की आवश्यक्ता है। प्राणायाम अभ्यास के लिए इन पॉचों वस्तुओं का होना अति आवश्यक है १—उत्तम स्थान २—उचित समय ३—साधारण, हल्का एव पुष्टकारी भोजन, ४—उत्साह एव शुद्धचित्त से धैर्य के साथ लगातार अभ्यास ५—नाड़ी शुद्धि। जब नाडियां शुद्ध हो जाती हैं तब मनुष्य योग की प्रथमावस्था को प्राप्त कर लेता है यही "आरम्भ है।" प्राणायाम के अभ्यासकर्त्ता को अच्छी भूख लगती है, पाचनशक्ति तीव्र होती है, उसमे प्रसन्नता, साहस, बलवीर्य एव सुन्दरता आ जाती है। योगी को तभी भोजन करना चाहिए जब कि सूर्यनाडी अथवा पिङ्गला जागृत हो, अर्थात जब कि श्वास दाहिने नासिका से चल रही हो, क्यों कि पिङ्गला मे उष्णता एव भोजन पचाने की तीव्र शक्ति होती है। प्राणायाम न तो भोजनोपरान्त ही तुरन्त करना चाहिए और न तब ही करना चाहिए जब कि खूब जोर से भूख लगी हो। धीरे धीरे प्राणायाम अभ्यास करने वाले को इतना अभ्यास हो जाना चाहिए कि वह एकबार में श्वास को लगभग डेढ घंटे तक रोक सके, ऐसी ही अवस्था में योगी अद्भुत शक्तियाँ प्राप्त कर लेता है। यदि कोई श्वास को कुछ काल के लिए रोकने का अभ्यास करना चाहे, तो उसके लिए यह उचित है कि, वह अपने

योग्य गुरु के बगल में बैठे। गुरु ऐसा हो जो कि प्राणायाम की क्रिया को अच्छी तरह जानता हो। श्वास निरोध की क्रिया धीरे धीरे क्रम से तीन मिनट तक बिना किसी की सहायता के भी की जा सकती है। तीन मिनट तक श्वास को रोकने से नाड़ियाँ काफी शुद्ध हो जाती हैं और चित्त की स्थिरता एवं शरीर की स्वस्थता प्राप्त होती है।

स्थान

प्राणायायाम में अभ्यासार्थ स्थान एकान्त तथा सुन्दर होना चाहिए जहाँ कि किसी प्रकार की भी अड़चनें न हों। जहाँ तक हो सके ऐसा स्थान झील, समुद्र या नदी के तट पर, अथवा पर्वत के शिखर पर हो. जहाँ कि मनमोहक झरनें और वृक्षों के कुञ्ज भी हो, जहाँ दूध तथा अन्य खाद्य पदार्थ भी सहज मिल सके। ऐसे ही स्थान में एक छोटी सी कुटी या झोपड़ी बनाई जाय, जिसके पास थोड़ी सी खाली जमीन भी हो। इसी घेर के एक कोन में एक कुआँ भी हो। परन्तु ऐसे स्थान बहुत कम ही मिलते हैं। कुटी के लिए नर्मदा, गंगा, जमुना, गोदावरी कावेरी, कृष्णा आदि नदियों के तट बहुत ही उत्तम स्थान होते हैं। ऐसा ही एक स्थान खोज निकालना चाहिए जिसके कि समीप ही अन्य योगियों की भी कुछ कुटियाँ बनी हों जिससे इन योगियों से यथासमय सलाह भी मिलती रहे। इससे योगाभ्यास में भी श्रद्धा बढ़ेगी। जब आप दूसरों को योगाभ्यास में तल्लीन देखेंगे, तब आप भी यथाशक्ति योगाभ्यास

में लग जायेंगे। क्योकि अन्य लोगो के अभ्यास को देखने से अधिक उत्साह भी होगा और आकाक्षा भी यही बनी रहेगी कि हम भी किस प्रकार इन योगियो से आगे बढ जाँय। योगाभ्यास के लिए नासिक, हृषिकेश, भूसी, प्रयाग, उत्तर काशी, वृन्दावन, अयोध्या, काशी आदि स्थान उत्तम है। योग के लिए ऐसा स्थान निश्चित कर लेना चाहिए जो कि आबादी से दूर हो। यदि बस्ती मे कुटी बनावेंगे तो बस्तीवाले उत्सुक हो प्राय तग किया करेंगे और फिर आप आध्यात्मिक भावों का अनुभव भी न कर सकेंगे। यदि जगल में कुटी बनावेंगे, तो वहाँ भी रक्षा नहीं है। वहाँ भी चोरों या जगली जन्तुओ का डर है। वहाँ भोजन की भी समस्या हल न हो सकेगी। श्वेताश्वर उपनिषद मे कहा गया है—ऐसे समतल स्थान मे, जहाँ कि ककड न हो, अग्नि का भय न हो, जो कि चित्ताकर्षक एव अभ्यास के योग्य हो और वायु के वेग से रक्षित हो, योगी ऐसे ही स्थान मे रहकर ईश्वर की आराधना मे ध्यान लगावे।

जो लोग अपने घर ही में अभ्यास करते हैं, वे अपने कमरे को जगल बना दे सक्ते हैं। कोई भी एकान्त कमरा उनके मतलब को हल कर सकता है।

समय

प्राणायाम का अभ्यास वसन्त अथवा शरद् ऋतु से आरम्भ करना चाहिये। क्योकि इन ऋतुओं में सफलता सरलता से

मिल सकती है। वसन्त ऋतु अंग्रेजी के मार्च और अप्रैल महीने में पड़ती है और शरद ऋतु सितम्बर व अक्टूबर माह में। ग्रीष्म ऋतु में दोपहर अथवा सायंकाल के समय प्राणायाम का अभ्यास कभी न करें। शीत ऋतु में प्रातःकाल के समय अभ्यास किया जा सकता है।

अधिकार

यौगिक क्रियाओं के अधिकारी वे ही हैं, जिन्होंने कि शान्त-चित्त हो कर अपनी इन्द्रियों का दमन कर लिया हो, जिनको कि शास्त्र एवं गुरुवचनों में विश्वास हो। जो कि आस्तिक हों और खान पान एवं शयन में संयम रखते हों, तथा जो कि जीवन-बन्धन से मुक्त होने की आकांक्षा रखते हों। ऐसे ही व्यक्तियों को प्राणायाम अथवा यौगिक क्रियाओं में सफलता प्राप्त हो सकती है। प्राणायाम का अभ्यास श्रद्धा परिश्रम एवं सावधानी से करना चाहिए।

जो लोग ऐन्द्रिक सुख के वशीभूत हों, जो क्रोधी, अविश्वासी, असत्यवादी, धूर्त एवं दुष्टप्रकृति के हैं, जो साधु, सन्यासी, गुरु एवं अध्यात्म योग के शिक्षकों का तिरस्कार करते हैं और निरर्थक वादविवाद करने में आनन्द लेते हैं, अथवा बकवादी स्वभाव के हैं; जो नास्तिक हैं और जो सांसारिक लोगों से विशेष हिले मिले रहते हैं, अथवा जो कठोर हृदय के हैं, लालची हैं और जिनका व्यवहार निरर्थक होता है, ऐसे लोग प्राणायाम अथवा

होने से, भूचर-सिद्धि प्राप्त करने की महती शक्ति आ जाती है जिससे कि वह समस्त भूमण्डल पर विचरते हुए प्राणियो को अपने वश में कर सकता है। इस प्रकार की अवस्था को प्राप्त किये हुए योगी के एक मुष्टि-प्रहार से चीतो, शेरो और हाथियो आदि जगली जानवरो के जान की नौबत आ जाती है। वह कामदेव की भॉति अत्यन्त सुन्दर हो जाता है। वीर्य धारण करने से योगी के शरीर से एक अत्यन्त सुन्दर सुगन्धि निकलती है।

यौगिक भोजन

भोजन सम्बन्धी वस्तुओ के चुनने के लिए योगी के हृदय से स्वभावत ही आवाज उठा करती है। अपने स्वभाव एव शरीर को प्रिय लगनेवाले सात्विक खाद्यपदार्थों को जानने के लिए योगी का हृदय ही अच्छा निर्णायक है।

मिताहार

ताजा एव अच्छी तरह पका हुआ सात्विक भोजन कुछ भूख रखकर ही करना चाहिए। भोजन आधा पेट ही हो और शेष आधे मे आधे को शुद्ध जल से पूरित करे। उदर का चतुर्थांश गैस इत्यादि के प्रसार के लिए तथा भोजन का भलीभॉति पचजाने के लिए खाली ही छोड रखना चाहिए।

भोजन में शुद्धता

आहार शुद्धौ सत्व शुद्धि, सत्व शुद्धौ धर्मस्मृति, स्मृति लाभे सर्व ग्रन्थि-नाम विप्रम मोक्ष" भोजन की पवित्रता से आन्तरिक हृदय की शुद्धता होती है, आन्तरिक शुद्धता से, स्मृतिशक्ति सुन्द हो जाती है, स्मृति की सुन्दरता से सभी बन्धन (माया के) शिथिल हो जाते हैं और तभी मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है।

भोजन करने के पश्चात् ही प्राणायाम का अभ्यास मत करो तथा जब खूब क्षुधा लगी हो, तब भी अभ्यास करना हानिकर है। प्राणायाम करने के पहले किसी जलाशय के पास जा कर अपने आमाशय को शुद्ध कर लो। प्रत्येक प्राणायाम अभ्यास करने वाले व्यक्ति को चाहिए कि वह खान पान में सयम रक्खे।

जो लोग कि भोजन के विषय में नियन्त्रण एव सयम रखते हैं, वे अभ्यासकाल में बहुत ही लाभ उठाते हैं, उन्हें शीघ्र ही सफलता मिल जाती है। वे लोग जो कि अपच के विषम रोग से पीडित होते हैं, वे बिना शौचादि क्रिया से निवृत्त हुए ही प्राणायाम का अभ्यास कर सकते हैं। फिर भी इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि प्रात काल आमाशय किसी भी ढंग से खाली हो कर शुद्ध हो जाय।

योगसाधन में आहार का स्थान बड़े ही महत्व का है। साधना प्रारम्भ करने के पहले, प्रत्येक व्यक्ति को सात्विक खाद्य

एवं प्रिय होती है। कुम्भक की वृद्धि के लिए भोजन धीरे धीरे कम कर देना चाहिए परन्तु अभ्यास के आरम्भकाल ही में भोजन कम कर देना उचित नहीं। साधन करने में अपनी बुद्धि के अनुसार काम करना चाहिए। जब पिङ्गला या सूर्य नाडी की गति नासिका के दाहिने भाग से हो, तभी भोजन करना उचित है। सूर्य नाडी से उष्णता की वृद्धि होती है, तभी भोजन भी ठीक पचता है। सब्जी में भाँटा, लौकी, परवर, भिंडी का व्यवहार करना चाहिए।

त्याज्य वस्तुएँ

चटपटा मसालेदार भोजन, चटनी, गोश्त, मछली, मिर्च, खट्टी चीजें टमाटर, सब प्रकार के तेल, नमक, प्याज, उर्द की दाल, अन्य तिक्त-पदार्थ, सूखी खाद्यवस्तुएँ, अशुद्ध शक्कर, शराबादि नशीली वस्तुएँ, खट्टा दही बासी भोजन, तेजाब, कषाय खाद्य वस्तुएँ, जली चीजें, गरिष्ठ भाजी, अधपके या अधिक पके फल इत्यादि के व्यवहार से मनुष्य वैज्ञानिक हो सकता है पर तत्त्वज्ञानी, योगी या दार्शनिक नहीं। सभी खाद्य वस्तुओं में क्षार अवश्य होता है। यदि भोजन में अलग से नमक न भी मिलाया जाय, तो भी पाचक मेशीन अन्य खाई हुई वस्तुओं से क्षार का अंश ले लेती है। नमक का व्यवहार न करने से शरीर पर कोई बुरा असर नहीं पडता, जैसा कि एलो-पैथिक डाक्टर सोचा करते हैं। नमक खाने से कामवासना की

जागृति होती है। महात्मा गाँधी तथा लखनऊ के योगानन्दजी ने आज तेरह साल से नमक खाना छोड़ दिया है। नमक का व्यवहार न करने से जिह्वा की लालुपता तथा मन की चञ्चलता शीघ्र ही वशीभूत हो जाती है और फिर आत्मशक्ति की वृद्धि होती है। स्वास्थ्य भी सुन्दर हो जाता है। अग्नि के पास बैठना, उपवास करना, नारियों की संगति, सांसारिक लोगों का संग, यात्रा, अधिक भार ले कर चलना, प्रात काल ठंडे जल में स्नान, कठोर वचन, झूठ बोलना, अविश्वासी होना, चोरी करना, जीवहिंसा करना, कायिक, वाचिक, मानसिक हिंसा करना, किसी के प्रति घृणा एवं शत्रुता करना, लड़ना झगड़ना, घमण्ड-करना, व्यवहार में भिन्नता रखना, चुगली खाना, धोखा देना, दुष्ट प्रकृति का होना, आत्मा तथा मोक्ष के अलावा अन्य विषयों पर वार्त्तालाप करना, मनुष्य तथा पशु के प्रति कठोर व्यवहार करना, ज्यादा उपवास करना, दिन में एकबार भोजन करना, इत्यादि २ प्राणायाम करनेवाले व्यक्ति के लिए त्याज्य है।

साधन के लिए कुटी

प्राणायाम अभ्यासार्थी को चाहिए कि वह एक सुन्दर कुटी बनावे, जिसमें सुनाव कम हो। यह गोबर से लिपी पुती हो अथवा सफेदी से पुती हुई हो। कीड़ों, मकोड़ों से रक्षित भी रहे। कुटी प्रतिदिन झाड़ू से बुहारी जानी चाहिए। भीतर सुगन्धित वस्तुओं से वायु शुद्ध किया जावे। ऐसी जगह कुशासन

पर मृगचर्म और फिर उसके ऊपर वस्त्र का आसन लगाकर अभ्यासकर्ता सीधा शरीरकर पद्मासन से बैठे और हाथ जोड़ कर अपने पूज्य देव श्रीगणेशजी को प्रणाम करे। तथा ॐ श्री गणेशाय नम का उच्चारण करे। तब वह प्राणायाम का अभ्यास प्रारम्भ करे।

मात्रा

जितना समय हथेली को घुटने के चारों ओर साधारणतया एकबार घुमाने में लगता है, उतने ही समय को मात्रा कहते हैं। अथ जितना समय एकबार के पलक मारने में लगता है उस समय को भी मात्रा कहते हैं, अथवा एकबार श्वास के आने जाने के समय को भी मात्रा कहते हैं, या जितना समय 'ओम्' शब्द के उच्चारण करने में लगता है, उतने समय को भी मात्रा कहते हैं। बहुत से प्राणायाम का अभ्यास करनेवाले प्राणायाम करने के समय इसी परिमित समय का आश्रय लेकर अभ्यास करते हैं।

पद्मासन

इसका दूसरा नाम कमलासन भी है। जब यह आसन लगाया जाता है तो मनुष्य कमल की भाँति भासित होता है। इसी से इस आसन को पद्मासन कहते हैं। जप और ध्यान के लिए बताये हुए अन्य चार आसनों में, पद्मासन का स्थान बहुत ही ऊँचा है। ध्यान के लिए यह सर्वोत्तम आसन है। इस आसन के विषय में घेरण्ड, शाँडिल्य आदि ऋषियों ने बड़ी

प्रशंसा लिखी है। गृहस्थों के लिए यह आसन बहुत ही सरल एवं उपयोगी है। यहाँ तक कि, देवियाँ भी यह आसन लगा

पद्मासन

सकती हैं। नवयुवकों तथा क्षीणकाय पुरुषों के लिए यह आसन बहुत ही लाभकारी है।

विधि

पैरों को सामने फैलाकर जमीन पर बैठ जाओ। फिर दाहिने पैर को बाँये जंघे पर रक्खो और बाँयें पैर को दाहिने जंघे पर। दोनों हाथों दोनों घुटनों के जोड़ों पर रखो। अँगुलियों को सिकोड़ कर हाथों को, जाय घुटने पर रख सकते हो यह कुछ लोगों के लिए सरल भी है। अथवा तर्जनी को अँगूठे के बीच में

लगाकर दाहिने हाथ को दाहिने घुटने और बाँये हाथ को बाँयें घुटने पर रखो। हथेलियाँ ऊपर की ओर रहें।

सिद्धासन

पद्मासन के बाद सिद्धासन का ही स्थान महत्व का है। कुछ लोग इस आसन की इतनी प्रशंसा करते हैं कि, ध्यान के लिए यह आसन पद्मासन से भी बढ़कर लाभप्रद है। यदि इस आसन के लगाने में कुशलता प्राप्त हो जाय तो अनेक सिद्धियाँ

सिद्धासन

मिल सकती हैं। प्राचीनकाल में सिद्ध महात्मा ही इस आसन का अभ्यास करते थे। इसी से यह सिद्धासन कहा जाता है। मोटे आदमी भी इस आसन का अभ्यास कर सकते हैं कुछ लोगो के लिए पद्मासन की अपेक्षा सिद्धासन ही हितकर है। ब्रह्मचारी

युवक को, जो कि पूर्ण ब्रह्मचर्यव्रत पालन करना चाहते हैं, उन्हें इसी आसन का अभ्यास करना चाहिए। देवियों के लिये यह ठीक नहीं है।

विधि

बाँयी एड़ी को गुदा के पास रक्खो और दाहिनी एड़ी को लिङ्ग की जड़ के पास रक्खो। पैर इस प्रकार से रखे जाँय कि गाँठों का मेल बराबर रहे। हाथों का स्थान पद्मासन मे बताये हुए आसन की भाँति होना चाहिये।

स्वस्तिकासन

शरीर को सीधा करके आराम से बैठने को स्वस्तिक आसन कहते हैं। पैरों को आगे फैला दो। बाँयें पैर को मोड़कर दाहिने जघे के पास रक्खो। उसी भाँति दाहिने पैर को झुका दो और पैरों को पिंडुरी और जघे के बीच से पैरों को बाहर निकाल दो। ध्यान के लिए यह आसन बड़ा ही हितकर है। दोनों हाथों को वैसे ही रखो जैसा कि पद्मासन मे बतलाया जा चुका है।

समासन

दाहिने जघे के जोड़ मे बाँयी एड़ी रखो और दाहिनी बाँये जघे की जड़ में। आराम से आसन मार कर बैठो।

दाहिने या बाँयें ओर झुककर मत बैठो। यही समासन कहा जाता है।

समासन

तीन बन्ध

सूर्य, उज्जायी, सीतली और वस्ति ये चार भेद हैं। इन्हीं चार उपायों में, जब कुम्भक की क्रिया की जाती हो, तब योगी को तीन बन्धों का प्रयोग करना चाहिए। पहला बन्ध मूलबन्ध है, दूसरा उड्डीयान और तीसरा जालन्धर कहा जाता है।

इनका वर्णन इस प्रकार है। अपान वायु को जिसकी कि स्वाभाविक गति नीचे की ओर होती है शरीर को नीचे झुकाकर

ऊर्ध्वगति कर दी जाती है, फिर ऐसा करने पर जब अपान वायु अग्नि स्थान में पहुँचता है तब अग्नि उद्दीप्त हो जाता है, तदनन्तर अग्नि और अपान का प्राण की उष्णावस्था से मेल हो जाता है। इस अग्नि से एक प्रकार की ज्वाला निकलती है, जो सुषुम्ना कुण्डलिनी को जगा देती है। उस समय कुण्डलिनी दण्ड से ताड़ित

तानो बन्ध

सर्प की भाँति सतर्क हो कर ब्रह्मनाडी (सुषुम्ना) के रन्ध्र मे प्रवेश करती है। कुम्भक के अन्त मे तथा श्वास छोड़ने के प्रारम्भ में उड्डीयान बन्ध का प्रयोग किया जाता है। कारण यह है कि प्राण इस बन्ध मे उड्डीयान करता हुआ (उड कर) सुषुम्ना में पहुँचता है। वज्रासन मे बैठकर तथा दोनों हाथो से दोनों पैर के अँगूठो को पकड़कर सरस्वती नाड़ी की गति को

धीरे धीरे पहले हृदय, फिर गर्दन की ओर ले जाना चाहिए। सरस्वती नाडी का स्थान उदर के पश्चिमी भाग मे नाभि के ऊपर है। जब प्राण नाभि के सन्धि-स्थान पर पहुँचता है, तब यह नाभि सम्बन्धी सभी रोगो को दूर कर देता है। अत इस बन्ध का प्रयोग पूर्ण रीति से किया जाना चाहिए।

उड्डीयान
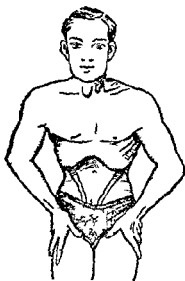
पूरक के अन्त में जालन्धर बन्ध का अभ्यास किया जाना चाहिए। गर्दन को सिकोडना तथा वायु की उर्ध्वगति को रोकना इस बन्ध का ही काम है। जब सिर नीचे की ओर यहाँ तक झुका दिया जाता है कि, ठोडी छाती से छू जाती है, तब प्राण

ब्रह्मनाडी में होकर चलता है। जैसा कि पहिले कहा जा चुका है। सरस्वती नाडी को जागृत करके प्राण को अपने वश में कर लेना चाहिए। पहले दिन कुम्भक चार बार करना चाहिए, दूसरे दिन दसबार और फिर अलग पाँच बार करना चाहिए। तीसरे दिन २० बार करना काफी है। फिर उसके बाद कुम्भक बन्धों के साथ प्रतिदिन पाँच बार बढाते हुए करना चाहिए।

आरम्भावस्था

प्रणव का उच्चारण तीन मात्रा के साथ करना चाहिए। यह इसलिए किया जाता है कि, पूर्वजन्म के पापों का विनाश हो जावे। प्रणव मन्त्र सभी पापों और बाधाओं को नष्ट करता है। इसका अभ्यास करने से योगी आरम्भावस्था को प्राप्त करता है। योगी के शरीर से पसीना निकलने लगता है। जब पसीने से शरीर तर हो जावे, तब योगी को चाहिए कि, वह हाथों को मले। शरीर में कपकपी भी होने लगती है। कभी कभी मेंढक की भाँति शरीर कूदने भी लगता है।

घटावस्था

श्वास को निरन्तर दबाने से दूसरी अवस्था घटावस्था की प्राप्त होती है। जब प्राण अपान का, मन और बुद्धि का, या जीवात्मा और परमात्मा का बिना किसी विरोध के पूर्ण मिलाप हो जाता है, तभी घटावस्था की प्राप्ति होती है। इस अवस्था को प्राप्त-योगी पूर्व बतलाये हुए समय के चतुर्थांश काल तक ही

अभ्यास कर सकता है। दिन भर में तीन घंटे तक ही अभ्यास करना चाहिए। दिन में एक बार कुम्भक का अभ्यास भी होना उचित है। श्वास निरोध के समय इन्द्रियों को पूर्ण रीति से इन्द्रियसुख-प्रद पदार्थों से हटाना ही प्रत्याहार कहा जाता है। सभी जगह वह आत्मा ही का रूप देखता है। शब्द आत्मा ही का सुनता है, प्राणवस्तु आत्मा ही के रूप में पाता है, जो कुछ भी स्वाद पाता है, वह आत्मा ही का रूप समझता है। जो कुछ भी वह स्पर्श करता है वह आत्मा ही का रूप है। योगी तभी भिन्न प्रकार की अद्भुत शक्ति प्राप्त कर लेता है और तभी वह क्षण में सैकड़ों कोस दूर जा सकता है, अद्भुत भाषण शक्ति प्राप्त कर लेता है, कोई भी भेष धारण कर सकता है, अदृश्य भी हो सकता है, लोहे को सोना बनाने आदि की शक्ति प्राप्त कर लेता है।

जो योगी सावधानी से योगाभ्यास कर लेता है, उसे अपने शरीर को बिलकुल हल्का कर देने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। परन्तु योगी को इन शक्तियों के वशीभूत न हो जाना चाहिए और न इन शक्तियों का प्रयोग किसी मनुष्य पर करना चाहिए। उसे तो इस संसार में अबोध एवं अज्ञानी की भाँति रहना चाहिए जिससे कि उसकी शक्तियाँ गुप्त रहें। परन्तु शिष्यों को अपनी इच्छापूर्ति के हेतु अपने गुरु से शक्ति दर्शन के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। जो कोई सांसारिक कार्यों में लग जाता है, वह योगाभ्यास भूल जाता है। अतः गुरुवचन

का स्मरण करते हुए, सिवाय निरन्तर योगाभ्यास के और कोई अभ्यास न करना चाहिए। इस भाँति जो सदा योगाभ्यास मे तल्लीन रहता है, वह घटावस्था को भी पार कर लेता है। सासारिक पुरुषों के सग मे कुछ भी लाभ नहीं होता। अत यह उचित है कि, हर तरह से बुरे लोगों का सग छोड कर योगाभ्यास करे।

परिचयावस्था

इसी प्रकार लगातार अभ्यास करने से परिचयावस्था की प्राप्ति होती है। कठिन अभ्यास से वायु, अग्नि के साथ विचार बुद्धि से • कुण्डलिनी को बेधता हुआ सुषुम्ना नाडी में बेरोक-टोक प्रवेश करता है। जब प्राण के साथ चित्त सुषुम्ना मे प्रवेश करता है, तब वह कपाल मे सर्वोच्चस्थान पर पहुँचता है। जब योगी योगाभ्यास से क्रियाशक्ति प्राप्त कर लेता है और षट्चक्रों को बेधता हुआ परिचयावस्था मे पहुँचता है, तब वह कर्मफल के तीनों रूपों को भलीभाँति समझ लेता है। तब योगी प्रणव (ॐ) की सहायता स कर्म के अनेकत्व को मिटा दे। "कायव्यूह" की पूर्ति करे। "कायव्यूह" वह रहस्यमय व्यवस्था है, जिसमें कि शारीरिक बन्धों द्वारा अनेक शरीर धारण करते हुए पूर्व कर्मों को पुनर्जन्म की आवश्यकता के बिना निःशेष कर दिया जाता है। उस समय महायोगी पॉच प्रकार की धारणाओं का अभ्यास करे अर्थात् ध्यान के वे रूप जिसमे कि पञ्चतत्वो पर अधिकार प्राप्त हो जाता है, और फिर हानि का भय नहीं रह जाता।

निष्पत्ति अवस्था

यह प्राणायाम की चौथी अवस्था है। शनै शनै अभ्यास करने से, योगी निष्पत्ति अवस्था को प्राप्त कर लेता है। योगी अपने सभी कर्मबीजों का नाश कर के अमरत्व रूपी अमृत का पान करता है। उसे भूख, प्यास निद्रा तथा बेहोशी आदि नही सताते। वह बिल्कुल स्वाधीन हो जाता है। वह कही भी बेरोक टोक जा सकता है। उसे फिर पुनर्जन्म नहीं लेना पडता। वह सभी रोगो से मुक्त हो जाता है तथा आयु के वृद्धत्व एव नाशत्व से भी बरी हो जाता है। वह समाधि के आनन्द का उपभोग करता है। फिर उसे कोई योगाभ्यास की आवश्यकता नही रहती अब योगी वायु का पान जिह्वाग्र से कर सकता है और वह प्राण व अपान की क्रियाओं के नियमों को जान लेता है, तब वह मोक्ष प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है।

योग का अभ्यास जैसे जैसे अपने नियमानुकूल अभ्यास मे आगे बढ़ता जाता है, वैसे वैसे वह स्वभावतः सभी अवस्थाओं का अनुभव क्रमश करने लगता है। अधीर अभ्यासी अनियमित अभ्यास के कारण किसी भी अवस्था का अनुभव नहीं कर सकता। योगाभ्यासी को मिताहार एव ब्रह्मचर्य पालन में पूर्ण सावधानी रखनी चाहिए।

तृतीय अध्याय

तृतीय अध्याय

प्राणायाम क्या है ?

तस्मिन्सति श्वासप्रश्वासयोर्गति विच्छेदः प्राणा-याम:—आसन सिद्ध करने के उपरान्त श्वास के आने और जाने की क्रिया पर अधिकार अर्थात इच्छानुसार चाहे जितनी देर तक साँस रोकने अर्थात कुम्भक कर सकने को प्राणायाम कहते हैं। पातञ्जलि योगसूत्र अध्याय दो, सूत्र ४९ में यही प्राणायाम की परिभाषा दी है।

नाक से अन्दर ली जाने वाली को श्वास और बाहर निकलने वाली को प्रश्वास कहते हैं। आसन सिद्ध करने के बाद प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। एक आसन पर तीन घंटे तक बैठे रहने पर, आसनसिद्धि प्राप्त होती है। आध घंटे से एक घंटे तक भी अगर एक आसन पर बैठ सको, तो प्राणायाम का अभ्यास आरम्भ किया जा सकता है। बिना प्राणायाम का अभ्यास हुए, आध्यात्मिक/उन्नति होना असम्भव है।

जहाँ तक व्यक्ति विशेष का सम्बन्ध है, प्राण की संज्ञा व्यष्टि है। समस्त ब्रह्माण्ड के पूरे प्राण को हिरण्यगर्भ कहते हैं। हिरण्यगर्भ ही समष्टि प्राण है। उदाहरण के लिए एक दियासलाई व्यष्टि है और पूरा दियासलाई का बक्स समष्टि है।

आम का एक पेड़ व्यष्टि है और पूरा आम का बगीचा समष्टि है। शरीर का शक्ति प्राण है। फफड़ और श्वास यन्त्र की क्रिया पर अधिकार प्राप्त करने से सारे शरीर में व्याप्त प्राण पर हम अधिकार प्राप्त कर सकते हैं। प्राण पर अधिकार होते ही मन पर अधिकार हो सकता है, क्योंकि मन प्राण से वैसे ही बँधा है जैसे एक चिड़िया डोरी के सहारे बँधी रहती है। जैसे अड्डे पर बँधी बुलबुल डोरी के कारण इधर उधर उड़ कर भी अन्त में अड्डे पर ही आ बैठता है, वैसे ही हमारी मन रूपी बुलबुल, इन्द्रिय जनित विषयों में इधर उधर उड़ कर, अन्त में सोते समय प्राण में उसी तरह बैठ जाती है, जैसे इधर उधर उड़ने के बाद थकी हुई बुलबुल अड्डे पर थक कर बैठती है।

गीता के अनुसार प्राणायाम की परिभाषा

अपाने जुह्वति प्राणम् प्राणेऽपान तथा परे।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायाम परायणाः॥

गीता अध्याय ४ श्लोक, २९

अपान वायु में प्राण वायु का प्रवेश करे तथा प्राण में अपान का। फिर प्राण और अपान दोनों की गति को रोके, बस इसी क्रिया का नाम प्राणायाम है। प्राणायाम उत्कृष्ट यज्ञ है। कुछ लोग पूरक (अर्थात श्वास लेने वाले) प्राणायाम का अभ्यास करते हैं, कुछ रेचक प्राणायाम (अर्थात् श्वास निकालने

वाले प्राणायाम का अभ्यास करते हैं, कुछ कुम्भक प्राणायाम (अर्थात पूरक द्वारा ली हुई साँस को यथाशक्ति रोकने का अभ्यास) अभ्यास करते हैं।

श्रीशङ्कराचार्य के अनुसार प्राणायाम की व्याख्या।

'मन में सर्वत्र ईश्वर के होने की धारणा का अभ्यास करके सम्पूर्ण जीवन शक्तियों पर अधिकार प्राप्त करने को प्राणायाम कहते हैं।"

संसार को मिथ्या मानना ही रेचक है। अहं ब्रह्मास्मि अर्थात् मैं ही ब्रह्म हूँ की धारणा का अभ्यास, पूरक प्राणायाम है।

अहं ब्रह्मास्मि की स्थायी धारणा ही कुम्भक प्राणायाम है। यही ज्ञानियों का प्राणायाम है। नाक दबा कर करने वाला प्राणायाम अज्ञानियों के लिए हैं।

अपरोक्षअनुभूति ११२—१२०

योगिराज भुशुण्डि के मतानुसार प्राणायाम की परिभाषा।

भुशुण्डि ने श्रीवसिष्ठ से कहा कि, इस पञ्चतत्त्व के बने

शरीर में निर्मल हृदय कमल है। उसी हृदयकमल में प्राण और अपान नामक दो वायु परस्पर मिले हो कर रहते हैं। सदाचारी मनुष्य के लिए बिना प्रयत्न के इन दोनों वायुओं का मार्ग हृदयाकाश में सूर्य और चन्द्रमा का भी हो जाता है और आकाशचारी होते भी, ये आकाशचारी प्राण इस हाड़ माँस के बने शरीर को सुखदायी उपासना गृह या मन्दिर बना देते हैं। ये वायु ऊपर नीचे भिन्न भिन्न अवस्थाओं में आते जाते रहते हैं। जागृत स्वप्न तथा सुषुप्ति अवस्थाओं में वे सदा एक से रहते हैं। अब हम इन दोनों वायुओं का वर्णन करते हैं। मैंने सुषुप्ति अवस्था की तरह अपनी जागृत अवस्था में भी सारी वासनाओं को मृत बना डाला है। कमल की एक डंडी के रेशों जैसे हजारों टुकड़ों से अधिक सूक्ष्म वायु के भेद हैं। अत इन वायुओं और उनके गुणों का बतलाना मेरे लिये बड़ा कठिन है। इन असंख्य वायुओं में प्राण नामक वायु इस शरीर में निरन्तर ऊर्ध्वगति से बाहर और भीतर चलता रहता है। इसी तरह क्रम से अपना वायु भी अधोगति से बराबर शरीर में सञ्चारित रहता है। १६ मात्रा काल बाहर जाने की तरह यदि प्राण १६ मात्रा ही भीतर भी लिया जाय, तो वह प्राण शरीर के लिए बहुत लाभकारक हो। किन्तु स्वाभाविक रीति से १२ मात्रा काल ही प्राण श्वास के साथ अन्दर आता है। जो लोग अभ्यास द्वारा श्वास और प्रश्वास में आने जाने वाले प्राण की मात्रा बराबर कर लेते हैं वे अमर सुख भोगते हैं।

अब प्राणवायु की विशेषताओं के विषय मे सुनिये। जो प्राणवायु भीतर १२ मात्रा तक रोका जा सके, उसे पूरक वायु कहते हैं। यह भी पूरक कहलायेगा, जब अपान वायु बाहर से शरीर मे बिना किसी परिश्रम के प्रवेश करता है। जितने समय में अपान वायु भीतर जा कर लोप हो जाता है और प्राणवायु हृदय में परिपूर्ण हो जाता है। उतने समय को कुम्भक कहते हैं। इन सब का अनुभव योगी लोग करते रहते हैं। शरीर से जब प्राण-वायु हृदय के बाहर सर्वत्र व्याप्त हो जाता है और मस्तिष्क को बिना कष्ट पहुँचाये बाहर निकलता है, तो उसे रेचक कहते हैं। जब बाहर से प्राणवायु नासिका में प्रवेश करता है और वही (नासिका के जड में) रुका रहता है तब उसे बाह्य पूरक कहते हैं। जब यह वहाँ से चलता है, तब १२ मात्रा तक नीचे चला जाता है। तब भी यह बाह्य पूरक कहलाता है। जब प्राणवायु बाहर आकर रोक दिया जाता है और अपान भीतर प्रवेश करता है, तथा रोका जाता है, तब उसे बाह्य कुम्भक कहते हैं। जब अपान वायु शरीर में ऊर्ध्वगति की ओर चलता है, तो यह बाह्य रेचक कहा जाता है। यही सब अभ्यास मोक्ष के साधन होते हैं। अत इन पर सदैव विचार किया जाना चाहिए। जिन्होंने इसको समझ लिया है, और बाह्य तथा अभ्यन्तर कुम्भक का अच्छी तरह अभ्यास कर लिया है, वे आवागमन से मुक्त हो जाते हैं।

मेरे बताये आठों उपायों का अभ्यास करने से मोक्ष प्राप्त

होती है। इन उपायों का अभ्यास रात और दिन करना चाहिए। जो लोग शान्तिपूर्वक इसका अभ्यास करते हैं तथा अपने मन को वश में करके इधर उधर नहीं दौड़ने देते, उन्हें कुछ समय में निर्वाण पद की प्राप्ति हो जाती है। इनके अभ्यास करने वाले सांसारिक सुख के इच्छुक नहीं रह जाते। चाहे वे चल रहे हों, खड़े हों, जागते हों, सोते हों, वे सर्वदा अपने अभ्यास में लगे रहते हैं।

बाहर गया हुआ प्राण १२ मात्रा काल में फिर लौट कर हृदय में प्रविष्ट होता है। इसी तरह बाहर निकला अपान वायु भी १० मात्रा काल में हृदय में लौट आता है। अपान चन्द्र (इडा का संचारी) होने से अपने संचार काल में सारे शरीर को शीतल रखता है। किन्तु प्राणवायु की सूर्य संज्ञा होने से उसके संचार के समय शरीर में गर्मी पैदा होती है और इस समय पेट की हर चीज पक कर पच जाती है। उस मनुष्य के शरीर में जो ऐसी उच्चावस्था में पहुँच चुका है, जहाँ प्राण (सूर्य) अपान (चन्द्रमा) की कलाओं को अपने में लीन करता रहता है, किसी तरह का दर्द नहीं पैदा हो सकता। जिस अवस्था में प्राण (सूर्य) की कलाओं का पान अपान (चन्द्रमा) करता है क्या ऐसी अवस्थाओं के सुख लूटने वाले का पृथ्वी पर फिर जन्म होगा? जो जीव इस सम अवस्था में पहुँचकर, जहाँ प्राण अपान का (सूर्य चन्द्रमा का) और अपान प्राण का (चन्द्र सूर्य का) परस्पर पान करते हैं, वे जन्म मरण के द्वन्द्व से मुक्त हो

जाते हैं। उस सम अवस्था का, जिसमें प्राण और अपान परस्पर एक दूसरे में लीन होते रहते हैं, निरन्तर आनन्द लेने वाले आत्मा की मैं स्तुति करता हूँ। जिस नासाग्र पर प्राण और अपान दोनों जाकर लीन होते हैं, उस नासाग्र पर उन आकाश-विहारी चिदात्मा का धाम है, जिनका मैं निरन्तर ध्यान किया करता हूँ। इस तरह प्राणों पर अधिकार प्राप्त करने के उपाय द्वारा, मैं सर्वोच्च, विशुद्ध तथा सब प्रकार के द्वन्द्वों से रहित तत्व को पा सका हूँ।

प्राणायाम के प्रकार

वाह्यभ्यन्तर स्तम्भः वृत्तिः देश काल संख्याभिः परिदृष्टो दीर्घात् सूक्ष्मात् ॥ योगसूत्र, अध्याय २ सूत्र ५०

प्राणायाम की सूक्ष्मता तथा दीर्घता उसके तीनों अंगों से ज्ञात होती है, जो क्रम से वाह्य, आन्तरिक और स्थिर हैं। स्थिरता का निरूपण देश, काल तथा संख्या से निश्चित होता है।

साँस निकालना अर्थात् रेचक प्राणायाम का प्रथम अंग है। साँस को भीतर लेना अर्थात् पूरक प्राणायाम का द्वितीय अङ्ग है। प्राण को रोकना अर्थात् कुम्भक प्राणायाम का तृतीय अङ्ग है। कुम्भक के अभ्यास से मनुष्य की आयु बढ़ती है। इसके अभ्यास से आन्तरिक आध्यात्मिक शक्ति, ओज और जीवनी शक्ति की बढ़ती होती है। यदि श्वास ले कर एक मिनिट रोको तो इतना रोकना भी आयु में वृद्धि करता है। योगी लोग ब्रह्मरन्ध्र में श्वास चढ़ा कर, मृत्यु के देवता यम को

परास्त कर देते हैं और मृत्यु पर विजय प्राप्त करते हैं। रेचक पूरक और कुम्भक देश, काल और सख्या से नियमित होते हैं। देश से यहाँ मतलब है शरीर के बाहर या भीतर श्वास की लबाई और चौड़ाई तथा वह विशेष अङ्ग जहाँ प्राण केन्द्रित किया जाय। भिन्न भिन्न व्यक्तियों में बाहर जाने वाली साँस की लबाई भिन्न भिन्न होती है। इसी तरह भीतर ली जाने वाली साँस के आकार में भी भिन्न भिन्न व्यक्तियों में भिन्नता होती है। पाच तत्वों के अनुसार आने जाने वाली साँस की लबाई में अन्तर होता जाता है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश तत्वों के अनुसार साँस की लबाई क्रम से १२, १६, ४, २ और ० अगुल होती है। तत्वों के अनुसार साँस का आकार आने और जाने वाली साँस दोनों में एकसा रहता है।

प्रत्येक तत्व के अस्तित्व के समय को काल कहते हैं, जिसकी गणना मात्रा से की जाती है। एक मात्रा एक सेकड के बराबर होती है। मात्रा एक तरह का माप है। काल के अर्थ यह भी होते हैं कि, कितने समय तक किसी अङ्ग में प्राण को रोकना चाहिए।

सख्या का अर्थ है कि, कितनी बार प्राणायाम किया गया। योग के विद्यार्थियों को शनैः शनैः प्राणायामों की सख्या बढ़ा कर ८० तक ले जानी चाहिए। प्रातःकाल, दोपहर, सन्ध्या और अर्धरात्रि के समय दिन रात में चार बार प्राणायाम करना चाहिए। इन चारों समयों में कुल मिला कर ३२० प्राणायाम

करने चाहिए। प्राणायाम का फल उद्‌गाता अर्थात सोती हुई कुण्डलिनी का जागरण है। प्राणायाम का मुख्य उद्देश्य है कि प्राण और अपान का संयोग करके, सम्मिलित प्राण और अपान को ब्रह्माण्ड तक ले जाना।

समस्त आध्यात्मिक शक्तियों का उद्‌गम कुण्डलिनी है। अभ्यास के समयानुसार प्राणायाम अल्प या दीर्घ होता है। जैसे कि गरम तवे पर गिरते ही पानी छनक कर सूखने लगता है, वैसे ही आभ्यान्तरिक कुम्भक में आने या जाने वाला प्राण धीरे २ निश्चल होने लगता है।

वाचस्पति का कहना है कि, "उद्‌गाता" अर्थात प्रथम प्रयत्न का माप ३६ मात्रा होता है। इसे कोमल प्रयत्न कहते हैं। द्वितीय प्रयत्न इसका दूना और मध्यमावस्था वाला कहा जाता है। तीसरा प्रयत्न बड़ा उग्र होता है। यह वह प्राणायाम है, जिसका नियन्त्रण संख्या में होता है।

रेचक अर्थात निकलने वाली श्वास का स्थान नासाग्र से आगे १२ अंगुल तक माना गया है। इसका निर्णय एक सीक में रुई लगा कर होता है। पूरक अन्दर आने वाली साँस का स्थान सिर से लगा कर पैर के तलवों तक माना गया है। इसका निर्णय चींटी की चाल का सा अनुभव होने लगने से होता है। रेचक और पूरक दोनों को लेकर कुम्भक का स्थान बाहर और भीतर माना गया है। क्योंकि श्वासक्रिया का सम्बन्ध बाहर और भीतर दोनों स्थानों पर रुकने की योग्यता पर है। इसका

निश्चय उपरोक्त दोनों क्रियाओं की अनुपस्थिति से होता है जिनका सम्बन्ध रचक और पूरक स है।

काल, सख्या और स्थान के अनुसार उपरोक्त तीनों प्रकार के प्राणायाम के नियमों पर चलना अपनी अपनी इच्छा पर है। इसका यह अर्थ नही है कि तीनों नियमों का पालन एक साथ करना चाहिए क्योंकि अनेक स्मृतियों के नियम अलग अलग हैं। कोई समय को ले कर चला है, कोई स्थान का और किसी ने सख्या का महत्व ही अधिक माना है।

चौथी प्रणाली है, प्राण का बाहरी या भीतरी स्थान विशेष पर केन्द्रीभूत करना।

बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी चतुर्थः।

योगसूत्र—अध्याय ४

योगसूत्रों के ५० वें सत्र के अनुसार तीसरे तरह के प्राणायाम का अभ्यास उद्गाता की प्राप्ति तक ही करना चाहिए। इसके बाद चौथे तरह के प्राणायाम का अभ्यास आरम्भ होता है। इस प्राणायाम में प्राण को भिन्न भिन्न चक्रों मे केन्द्रीभूत करके धीरे धीरे अन्त में कपालस्थित सहस्रार नामक चक्र मे ले जाना होता है, जहाँ प्राण को ले जाने स समाधि लग जाती है। यह आन्तरिक क्रिया है। अभ्यान्तरिक प्राणायाम मे समयानुसार रहने वाले तत्त्व के अनुसार साँप के आकार को रखने का साधन करना पडता है। प्राण भीतर और बाहर सभी जगह चालन किया जा सकता है।

आरम्भिक तीनों प्रकार के प्राणायामों पर अभ्यास द्वारा अधिकार प्राप्त करने के उपरान्त चतुर्थ प्रकार के प्राणायाम का आरम्भ करना चाहिए। तीसरे प्रकार के प्राणायाम में वातावरण का ध्यान नहीं रखा जाता। एक ही प्रयत्न में साँस रोक दी जाती है और स्थान, काल तथा संख्या के अनुसार उसे नाप कर दीर्घ तथा सूक्ष्म बनाते हैं। चौथे प्रकार में पूरक और रेचक के वातावरण का निश्चय होता है। भिन्न भिन्न अवस्थाओं पर धीरे धीरे अधिकार होता है। तीसरे प्रकार की तरह सहसा ही चौथे प्रकार के प्राणायाम का अभ्यास नहीं करना चाहिए। प्राणायाम में जैसे जैसे अभ्यास किया जाता है, वैसे वैसे ही भिन्न भिन्न अवस्थाओं की पूर्णता प्राप्त होती है। एक अवस्था की पूर्णता प्राप्त करने के बाद ही दूसरी अवस्था का अभ्यास आरम्भ कर देना चाहिए। इस तरह एक के बाद दूसरे का अभ्यास होता रहता है। तीसरे प्रकार के प्राणायाम के पहले माप जानने की आवश्यकता नहीं है और एक ही प्रयत्न से उसका अभ्यास हो जाता है। किन्तु चौथे का अभ्यास बिना नाप जाने नहीं हो सकता। चौथे प्रकार के प्राणायाम में कठिन अभ्यास करना पड़ता है। तीसरे और चौथे में यही बड़ा भेद है। इस प्राणायाम में भी काल, स्थान और संख्या के भेद लागू हैं। सफलता की प्रत्येक अवस्था के अनुसार आध्यात्मिक शक्तियों का विकास भी होता रहता है।

अधम, मध्यम और उत्तम नाम से प्राणायाम के तीन

भेद माने गये हैं। अधम प्राणायाम १२ मात्रा काल का, मध्यम २४ मात्रा काल का और उत्तम ३२ मात्रा काल का माना गया है। ये मात्राएँ पूरक की हैं। पूरक कुम्भक और रेचक का हिसाब १४२ का है। पूरक अर्थात साँस खींचना, कुम्भक अर्थात साँस रोकना और रेचक अर्थात साँस निकालना। पूरक करने में यदि १२ मात्रा का समय लगता है तो कुम्भक में ४८ मात्रा का और रेचक में २४ मात्रा काल लगेगा। यह अधम प्राणायाम का मात्रकाल है। यही नियम मात्रानुसार मध्यम और उत्तम प्रकार के प्राणायाम में लगता है। आरम्भ में एक महीने तक अधम प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। फिर मध्यम प्रकार के प्राणायाम का अभ्यास तीन महीने करना चाहिए और तब उत्तम प्रकार के प्राणायाम का आरम्भ करना चाहिए।

आसन पर बैठ कर पहले अपने गुरु और श्रीगणेश जी को नमस्कार करो। प्राणायाम के अभ्यास का समय है ४ बजे सवेरे, १० बजे दिन ५ बजे शाम और रात में १० से १२ बजे तक। जैसे २ अभ्यास बढ़ता जायगा प्राणायाम की संख्या भी बढ़ती जायगी और एक रोज़ में ३२० प्राणायाम तक करने होंगे।

सगर्भ प्राणायाम उसे कहते हैं जिसके करने के समय गायत्री, ओंकार या और किसी मन्त्र का मानसिक जप किया जाय। अगर्भ प्राणायाम की अपेक्षा सगर्भ प्राणायाम सौगुना अधिक शक्तिशाली होती है। अगर्भ प्राणायाम में किसी मन्त्र का जप

नहीं किया जाता। साधक के अभ्यास के मात्रानुसार ही प्राणायाम में सिद्धि प्राप्त होती है। परम उत्साह साहस और दृढता वाला अभ्यासी ६ महीने में सिद्धि प्राप्त कर सकता है। इसके विपरीत आलसी, या निरन्तर तन्द्रा में पड़े रहने वाला अभ्यासी दस वर्ष के अभ्यास में भी कुछ न कर सकेगा। धैर्य के साथ निरन्तर अभ्यास करते चलो। तुम्हारा धैर्य, भक्ति, विश्वास और लगन तुम्हें अपने लक्ष्य तक अवश्य पहुँचायेगी। तुमको सफलता अवश्य मिलेगी। निरुत्साहित होने का कोई कारण नहीं है।

वेदान्तिक कुम्भक

सब तरह निश्चिन्त होकर शान्त चित्त से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। आने और जाने वाली श्वास की गति का अवरोध कर दो। अभ्यासकर्ता को ब्रह्म में विश्वास रख कर ब्रह्मप्राप्ति ही को अपना प्रधान लक्ष्य बनाना चाहिए। सब तरह के बाह्य पदार्थों का त्याग ही रेचक है। शास्त्रों के आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति ही पूरक है और इस ज्ञान पर अनवरत भाव में आरूढ होने का नाम ही कुम्भक है। चित्त को इस तरह अभ्यास में लगाए रहने वाला व्यक्ति ही वास्तव में मुक्त पुरुष है। इसमें कोई सन्देह नहीं। कुम्भक द्वारा ही मन को ऊपर उठाना चाहिए और कुम्भक ही से इसे पूरित करना चाहिए। कुम्भक द्वारा ही कुम्भक पर पूरा अधिकार प्राप्त किया जा सकता है। इसीमें परम शिव का निवास है। इस तरह अभ्यास करने से ब्रह्मग्रन्थि में स्वयं

एक छिद्र रूपी मार्ग का प्रादुर्भाव होना है। ब्रह्मग्रन्थि के भेदन के उपरान्त विष्णुग्रन्थि और विष्णुग्रन्थि के भेदन के उपरान्त रुद्रग्रन्थि का भेदन होता है। वेध के द्वारा योगी माया के बन्धनों से मुक्त हो जाता है, गुरु और देवताओं की कृपा और योगाभ्यास द्वारा योगी असंख्य बार के जनन मरण से निरन्तर पूर्ण इस संसार-चक्र से मुक्त हो जाता है।

नाडी शुद्धि करने वाला प्राणायाम

नाडियों में जब तक मल भरा रहता है, तब तक उनमें वायु प्रवेश नहीं कर सकता। प्राणायाम का अभ्यास करने के पहले नाडियों की सफाई करना परमावश्यक है। समानु और निर्मानु नामक दो उपायों से नाडी शुद्ध होती है। समानु उपाय में बीज मन्त्र के जप द्वारा नाडी की शुद्धि की जाती है। निर्मानु उपाय से शारीरिक षट्कर्मों द्वारा नाडी की शुद्धि होती है।

१—पद्मासन लगा कर बैठ जाओ। धूम्र वर्ण के वायु बीज य का ध्यान करो। वामनासा छिद्र से सांस लो। पूरक करते समय १६ बार वायु बीजाक्षर को मन में जपो। इसी तरह मन में ६४ बार उसी बीजाक्षर का जप करते हुए कुम्भक करो और फिर बहुत धीरे धीरे रेचक करो। ३२ बार बीज मन्त्र के जप में रेचक समाप्त होना चाहिए।

२—नाभि में अग्नि तत्व का स्थान है। अग्नि तत्व का ध्यान करो। अब दक्षिण नासारन्ध्र से पूरक करो। पूरक में इतना समय लगे जिसमें अग्नि बीज र का १६ बार मानसिक

जप हो जाय । इसी तरह ६४ बार र बीज का जप करते हुए कुम्भक करो और ३२ बार र बीज का मानसिक जप करते हुए बाम नासा छिद्र से धीरे धीरे रेचक करो ।

३—चन्द्रमा (भ्रूमध्य) पर अपनी दृष्टि स्थिर करो। अब वामनासा छिद्र द्वारा १६ बार य बीज का मानसिक जप करते हुए पूरक करो। ६४ बार य बीज का जप करते हुए कुम्भक करो। कुम्भक के समय ऐसा समझो कि चन्द्रमा से प्रवाहित होने वाला अमृत सारे शरीर की रग रग में बह कर नाड़ीशुद्धि कर रहा है। अब ३२ बार पृथ्वी बीज ल का मन मे जप करते हुए दक्षिण नासा छिद्र से रेचक करो।

उपरोक्त तीनों प्रकार के प्राणायामों का अभ्यास करने से नाड़ियाँ शुद्ध हो जाती हैं। इसके उपरान्त अपने नित्य के अभ्यास वाले आसन पर बैठ कर मामूली प्राणायाम का अभ्यास करो।

प्राणायाम का मन्त्र

प्राणायाम करने के समय का मन्त्र ईश्वर गीता मे बतलाया गया है। कुम्भक के समय अभ्यासकर्ता ॐ मे सप्त व्याहृतियों के साथ तीन बार गायत्री का जप करे और अन्त में शिरस कहे जिसके आदि और अन्त मे प्रणव कहा जाता है। इसी को श्वास प्राणायाम का नियन्त्रण कहते हैं।

योगी याज्ञवल्क्य का मत है कि, "प्राण और अपान

वायुओं को प्राणायाम द्वारा रोक कर अर्थात् कुम्भक करने के समय मात्रानुसार प्रणव का जप करना चाहिए।

केवल प्रणव के जप करने की व्यवस्था परमहंस सन्यासियों के लिए ही है। स्मृतियों की आज्ञा है कि, पूरक कुम्भक और रेचक करते समय क्रम से नाभि, हृदय और ललाट में ब्रह्मा विष्णु और शिव का ध्यान करे। परमहंसों के लिए सब अवस्थाओं में केवल ब्रह्म के ध्यान करने की व्यवस्था है। श्रुति की आज्ञा है कि, जितेन्द्रिय सन्यासी प्रणव का जप करता हुआ ब्रह्म का ध्यान करे।

अभ्यास १

पद्मासन लगा कर बैठ जाओ। आँखें बन्द करके त्रिकुटी (भ्रूमध्य) पर ध्यान लगाओ। अब दक्षिण नासारन्ध्र दक्षिण हस्त के अंगुष्ठ से बन्द करो। जब तक आराम से साँस ले सको वामनासा रन्ध्र से श्वास खींचो। पूरक बिना किसी तरह का शब्द किये शान्तिपूर्वक करो। इसके बाद धीरे धीरे साँस वामनासा रन्ध्र से ही निकाल दो। पूरक और रेचक करते समय मन में अपने इष्टमन्त्र का जप करते रहो। इस तरह १२ बार करो। १२ आवृत्तियों का एक अभ्यास होता है।

इसी तरह वाम नासा रन्ध्र बंद करके दक्षिण नासा रन्ध्र से पहले की तरह धीरे धीरे पूरक करना चाहिए और फिर उसी नासा रन्ध्र से रेचक कर देना चाहिए। पहले की तरह १२ आवृत्तियों का अभ्यास करना चाहिए।

एक सप्ताह ऊपर बतलायी एक आवृत्ति का अभ्यास करने के बाद दूसरे सप्ताह दो आवृत्तियाँ और तीसरे सप्ताह बढ़ा कर तीन आवृत्तियों का अभ्यास करना चाहिए। एक आवृत्ति के बाद दो मिनिट का आराम करके फिर दूसरी आवृत्ति करना चाहिए। एक आवृत्ति के बाद दो तीन बार भर पेट साँस लेने से अगली आवृत्ति करने के लिए शरीर में ताजगी आ जाती है। इस तरह के अभ्यास में कुम्भक नहीं करना होता।

अभ्यास २

आसन लगा कर बैठ जाओ। दाहिने हाथ के अँगूठे से दहिना नासा रन्ध्र बंद करो और तब वामनासा रन्ध्र से धीरे धीरे साँस भरो। साँस भर चुकने के बाद कनिष्ठिका और अनामिका उँगलियों से वामनासा रन्ध्र बंद करके दक्षिण नासा रन्ध्र से धीरे धीरे साँस निकाल दो।

इसके बाद धीरे धीरे दक्षिण नासा रन्ध्र से साँस भर कर वामनासा रन्ध्र से ऊपर कही रीति से साँस धीरे धीरे निकाल दो। इस प्राणायाम में कुम्भक करने की आवश्यकता नहीं। इस तरह बारह बार प्राणायाम करो। १२ प्राणायाम की एक आवृत्ति होती है।

गहरी साँस लेनेवाला व्यायाम

प्रत्येक गहरी साँस लेने में अधिक से अधिक मात्रा में नाक द्वारा वायु से पेट भरा जाता है और नाक ही से पूरी साँस बिल्कुल निकाल दी जाती है।

धीरे धीरे जितनी सासें ले सको उतनी लो और धीरे धीरे जितनी अधिक साँस निकाल सको निकाल दो। सासें लेते समय निम्नलिखित नियमो का पालन करो।

१—सीधे खडे हो जाओ। हाथ कमर पर रहे और कुहनी बाहर की तरफ निकली रहे। आराम से शरीर को ढीला करके खडे हो।

२—छाती को सीधे ऊपर की तरफ ऊँचा करो। कमर की हड्डी को हाथो से दबा कर दबाए रखो। ऐसा करने से खाली जगह मे हवा अपने आप भरेगी।

३—नासारन्ध्रो को फैलाए रखो। नाक से पिचकारी की तरह साँस मत खींचो। नाक को केवल हवा के आने जाने का मार्ग रखो। साँस को लेने और निकालते समय किसी तरह का शब्द न हो। इसका ध्यान रखो कि विशुद्ध पूरक वही है, जिसमे बिल्कुल शब्द नही होता।

४—पेड का ऊपरी भाग बिल्कुल फैला रखो।

५—छाती के ऊपरी हिस्से को झुकाओ मत। पेडू को ढीला करके रखो।

६—सिर को पीछे की तरफ बहुत मत झुकाओ, पेडू को अन्दर मत खींचो। कधो को पीछे न झुकाकर, सीधे रखो। कधे सीधे और ऊँचे रखो।

साँस निकालते समय निम्न नियमो का पालन करो।

१—साँस निकालते समय पसलियाँ और धड का सारा ऊपरी हिस्सा धीरे धीरे साँस निकालने के साथ साथ सिकुड़ता जाय।

२—नीचे वाली पसलियाँ और पेडू ऊपर खिंचते आवें।

३—शरीर को आगे बहुत मत झुकने दो। छाती को भी मत झुकने दो। धड, गर्दन और सिर एक सीध में रखो। साँस मुह से कभी मत निकालो। बिना किसी तरह का शब्द किये बहुत धीरे धीरे साँस नाक से निकाल दो।

४—साँस लेने वाली माँसपेशियों को जरा सा ढीला करते ही साँस अपने आप बाहर निकलने लगती है। छाती अपने बोझ से स्वयं बैठने लगती है और साँस को नाक से बाहर निकाल देती है।

५-आरम्भ मे साँस लेने के बाद साँस को रोकने का प्रयत्न मत करो। साँस ले चुकने के बाद ही साँस निकालना शुरु कर दो। जब तुम्हारा अभ्यास यथेष्ट बढ जाय, तब धीरे धीरे यथा-शक्ति ५ सकेंड से १ मिनट तक कुम्भक करने का अभ्यास करो।

६—तीन गहरे पूरकों की आवृत्ति करने के बाद थोड़ा आराम करो। आराम करने का अर्थ है, दो चार मामूली साँसे लेने से। उसके बाद दूसरी आवृत्ति आरम्भ करो।

आराम करते समय कमर पर हाथ रखे हुए शरीर को ढीला करके खड़े रहो। अभ्यासकर्ता अपनी शक्ति के अनुसार

बाह्य कुम्भक

तीन बार 'ओम्' का उच्चारण करते हुए वाम-नासारन्ध्र से श्वास खींचो और छः बार 'ओम' का उच्चारण करते हुए दक्षिण नासा रन्ध्र से श्वास को बाहर फेंक दो। बारह बार 'ओम' का उच्चारण करते हुए श्वास बाहर रोके रहो। तब पुनः दक्षिण नासा रन्ध्र से श्वास खींचो, और वाम से बाहर फेंक दो, और पहले की तरह बाहर रोके रहो। श्वास लेने, छोड़ने तथा स्थिर रखने में पूर्ववत् 'ओम' का उच्चारण करो। इस क्रिया को सुबह शाम छः छः बार करो। धीरे धीरे श्वासों की संख्या तथा कुम्भक का समय बढ़ाओ। क्रिया करते समय थकावट या परिश्रम न मालूम होना चाहिए।

सुखसाध्य प्राणायाम

अपने इष्ट देवता का चित्र सामने रखकर अपने ध्यानागार में पद्मासन या सिद्धासन लगाकर बैठ जाओ। दाहिने अंगूठे से दक्षिण नासारन्ध्र को दबाओ और वामनासारन्ध्र से धीरे धीरे श्वास खींचो। तब दाहिने हाथ की छोटी और नाम अंगुलियों

फेंको । ये छहों क्रियायें एक प्राणायाम् को पूरा करती हैं । बीस प्रातःकाल तथा बीस सध्या को करो । धीरे धीरे संख्या बढ़ाओ । अपने समक्ष यह ध्यान रखो कि समस्त दैवी सम्पत्तियाँ अर्थात दया, प्रेम, क्षमा, शान्ति, आनन्द आदि श्वास के साथ शरीर में प्रवेश कर रही हैं तथा समस्त आसुरी सम्पत्तियाँ अर्थात काम, क्रोध, लोभ आदि श्वास के साथ बाहर जा रही हैं । पूरक, कुम्भक तथा रेचक करते समय 'ओम' या गायत्री का उच्चारण करो । कठिन परिश्रम करने वाले साधक, एक आसन में अस्सी के हिसाब से प्रतिदिन चार आसन में तीन सौ बीस कुम्भक कर सकते हैं ।

यह प्राणायाम क्षय रोगों को दूर करता है, नाड़ियों को शुद्ध करता है, मन को एकाग्र बनाता है, पाचनशक्ति बढ़ाता है, भूख बढ़ती है, ब्रह्मचर्य रक्षा में सहायक होता है तथा मूलाधारचक्र में सुषुम कुण्डलिनी को जगाता है । नाड़ीशुद्ध तत्क्षण होती है, तथा मनुष्य भूमि से ऊपर भी उठ सकता है ।

कुण्डलिनी को जागृत करने वाला प्राणायाम

जब तुम नीचे वाली क्रिया करने लगो, तब तुम मूलाधार चक्र पर अपना ध्यान रखो । यह चक्र रीढ़ की हड्डी के पेंदे में त्रिकोणाकार है तथा कुण्डलिनी का मूलस्थान है । दाहिने अंगूठे से दाहिना नासारन्ध्र का बंद करो । धीरे धीरे तीन बार ओम् कहते हुए बाम नासारन्ध्र से श्वास खींचो । ध्यान करो कि तुम वायु

बाह्य कुम्भक

तीन बार 'ओम' का उच्चारण करते हुए वाम-नासारन्ध्र से श्वास खींचो और छः बार 'ओम' का उच्चारण करते हुए दक्षिण नासा रन्ध्र से श्वास को बाहर फेंक दो। बारह बार 'ओम' का उच्चारण करते हुए श्वास बाहर रोके रहो। तब पुनः दक्षिण नासा रन्ध्र से श्वास खींचो, और वाम से बाहर फेंक दो, और पहले की तरह बाहर रोके रहो। श्वास लेने, छोड़ने तथा स्थिर रखने में पर्यन्त 'ओम' का उच्चारण करो। इस क्रिया को सुबह साँझ छः छः बार करो। धीरे धीरे श्वासों की संख्या तथा कुम्भक का समय बढ़ाओ। क्रिया करते समय थकावट या परिश्रम न मालूम होना चाहिए।

सुखसाध्य प्राणायाम

अपने इष्ट देवता का चित्र सामने रखकर अपने ध्यानागार में पद्मासन या सिद्धासन लगाकर बैठ जाओ। दाहिने अंगूठे से दक्षिण नासारन्ध्र को दबाओ और वामनासारन्ध्र से धीरे धीरे श्वास खींचो। तब दाहिने हाथ की छोटी और मध्य अंगुलियों से वामनासारन्ध्र बन्द कर दो। जब तक सुख से श्वास रोक सकते हो रोको। तब अँगूठा हटा कर दक्षिण नासारन्ध्र से श्वास को बाहर फेंको। इस तरह आधी क्रिया समाप्त हुई। अब दक्षिण नासारन्ध्र से श्वास खींचो। पर्यन्त रोक कर बाँये से

फेंकदो। ये छहों क्रियायें एक प्राणायाम को पूरा करती हैं। बीस प्रातःकाल तथा बीस सन्ध्या को करो। धीरे धीरे संख्या बढ़ाओ। अपने समक्ष यह ध्यान रखो कि समस्त दैवी सम्पत्तियाँ अर्थात दया, प्रेम, क्षमा, शान्ति, आनन्द आदि श्वास के साथ शरीर में प्रवेश कर रही है तथा समस्त आसुरी सम्पत्तियाँ अर्थात काम, क्रोध, लोभ आदि श्वास के साथ बाहर जा रही हैं। पूरक, कुम्भक तथा रेचक करते समय 'ओम' या गायत्री का उच्चारण करो। कठिन परिश्रम करने वाले साधक, एक आसन में अस्सी के हिसाब से प्रतिदिन चार आसन में तीन सौ बीस कुम्भक कर सकते हैं।

यह प्राणायाम क्षय रोगों को दूर करता है, नाड़ियों को शुद्ध करता है, मन को एकाग्र बनाता है, पाचनशक्ति बढ़ाता है, भूख बढ़ती है, ब्रह्मचर्य रक्षा में सहायक होता है तथा मूलाधारचक्र में सुषुप्त कुण्डलिनी को जगाता है। नाड़ीशुद्धि तत्क्षण होती है, तथा मनुष्य भूमि से ऊपर भी उठ सकता है।

कुण्डलिनी को जाग्रत करने वाला प्राणायाम

जब तुम नीचे वाली क्रिया करने लगो, तब तुम मूलाधार चक्र पर अपना ध्यान रखो। यह चक्र रीढ़ की हड्डी के पेंदे में त्रिकोणाकार है तथा कुण्डलिनी का मूलस्थान है। दाहिने अंगूठे से दक्षिण नासारन्ध्र को बन्द करो। धीरे धीरे तीन बार ओम् कहते हुए वाम नासारन्ध्र से श्वास खींचो। ध्यान करो कि ऊर्ध्व वायु

बाह्य कुम्भक

तीन बार 'ओम' का उच्चारण करते हुए वाम-नासारन्ध्र से श्वास खींचो और छः बार 'ओम' का उच्चारण करते हुए दक्षिण नासा रन्ध्र से श्वास को बाहर फेंक दो। बारह बार 'ओम्' का उच्चारण करते हुए श्वास बाहर रोक रहो। तब पुनः दक्षिण नासा रन्ध्र से श्वास खींचो, और वाम से बाहर फेंक दो, और पहले की तरह बाहर रोके रहो। श्वास लेने, छोड़ने तथा स्थिर रखने में पूर्ववत 'ओम' का उच्चारण करो। इस क्रिया को सुबह साँझ छः छः बार करो। धीरे धीरे श्वासों की संख्या तथा कुम्भक का समय बढ़ाओ। क्रिया करते समय थकावट या परिश्रम न मालूम होना चाहिए।

सुखसाध्य प्राणायाम

अपने इष्ट देवता का चित्र सामने रखकर अपने ध्यानागार में पद्मासन या सिद्धासन लगाकर बैठ जाओ। दाहिने अंगूठे से दक्षिण नासारन्ध्र को दबाओ और वामनासारन्ध्र से धीरे धीरे श्वास खींचो। तब दाहिने हाथ की छोटी और नाम अंगुलियों से वामनासारन्ध्र बन्द कर दो। जब तक सुख से श्वास रोक सकते हो रोको। तब अँगूठा हटा कर दक्षिण नासारन्ध्र से श्वास को बाहर फेंको। इस तरह आधी क्रिया समाप्त हुई। अब दक्षिण नासारन्ध्र से श्वास खींचो। पूर्ववत रोक कर बायें से

फेंको। ये छहों क्रियायें एक प्राणायाम को पूरा करती हैं। बीस प्रातःकाल तथा बीस संध्या को करो। चार बीर सन्ध्या बढ़ाओ। अपने समक्ष यह ध्यान रखो कि समस्त दैवी सम्पत्तियाँ अर्थात् दया, प्रेम, क्षमा, शान्ति, आनन्द आदि श्वास के साथ शरीर में प्रवेश कर रही हैं तथा समस्त आसुरी सम्पत्तियाँ अर्थात् काम, क्रोध, लोभ आदि श्वास के साथ बाहर जा रही हैं। पूरक, कुम्भक तथा रेचक करते समय 'ओम्' या गायत्री का उच्चारण करो। कठिन परिश्रम करने वाले साधक, एक आसन में अस्सी के हिसाब से प्रतिदिन चार आसन में तीन सौ बीस कुम्भक कर सकते हैं।

यह प्राणायाम क्षय रोगों को दूर करता है, नाड़ियों को शुद्ध करता है, मन को एकाग्र बनाता है, पाचनशक्ति बढ़ाता है, भूख बढ़ती है, ब्रह्मचर्य रक्षा में सहायक होता है तथा मूलाधारचक्र में सुषुप्त कुण्डलिनी को जगाता है। नाड़ीशुद्ध तत्क्षण होती है, तथा मनुष्य भूमि से ऊपर भी उठ सकता है।

कुण्डलिनी को जाग्रत करने वाला प्राणायाम

जब तुम नीचे वाली क्रिया करने लगो, तब तुम मूलाधार चक्र पर अपना ध्यान रखो। यह चक्र रीढ की हड्डी के पेंदे में त्रिभुजाकार है तथा कुण्डलिनी का मूलस्थान है। दाहिने अंगूठे से दक्षिण नासारन्ध्र को बंद करो। धीरे धीरे तीन बार ओम् कहते हुए बाम नासारन्ध्र से श्वास खींचो। ध्यान करो कि ऊर्ध्व वायु

से प्राण खींच रहे हो। तब दाहिने हाथ की अनामिका और कनिष्ठिका अगुलियों से वाम नासारन्ध्र बन्द करो। बारह बार ओम् कहते हुए श्वास स्थिर रखो। त्रिपटम कमलवत मूलाधार चक्र में श्वास को रीढ से पहुँचाओ। ध्यान करो कि श्वासधारा चक्र छूती है तथा कुण्डलिनी को जागृत करता है। छः बार ओम् कहते हुए दक्षिण नासारन्ध्र से धीरे धीरे वायु को निकालो। इसी प्रकार उन्हीं विधियों का प्रयोग तथा ध्यान करते हुए दक्षिण नासारन्ध्र से प्राणायाम को दोहराओ। इस प्राणायाम से कुण्डलिनी बहुत शीघ्र जागृत होती है। इस क्रिया को तीन बार सवेरे और तीन बार शाम को करो। अपनी शक्ति और कार्यकुशलता के अनुसार संख्या और समय को धीरे धीरे बढाओ। इस प्राणायाम में मूलाधार चक्र पर एकाग्र ध्यान रखना बहुत आवश्यक है। यदि एकाग्रता अत्यधिक है और प्राणायाम नित्य किया जाता है तो कुण्डलिनी बहुत शीघ्र जागृत होगी।

ध्यानावस्था में प्राणायाम

यदि तुम एकाग्रता और ध्यान का अभ्यास करोगे तो प्राणायाम आप से आप आ जायगा। श्वास धीरे धीरे कम होता जाता है। हम सब इस प्राणायाम का रोज अनजाने करने लगते हैं। जब तुम कोई सनसनीदार कहानी की पुस्तक पढते हो अथवा गणित का कोई सवाल करते हो तब तुम्हारा मन बिल्कुल उसीमें लीन हो जाता है। यदि तुम उस समय श्वास

पर ध्यान दोगे तो तुम देखोगे कि तुम्हारा श्वास बहुत धीमा चल रहा है। जब तुम कोई दु खपूर्ण नाटक या सिनेमा देखते हो, जब तुम कोई दु खमयी या सुखमयी वार्ता सुनते हो, शोकाश्रु या आनन्दाश्रु बहाते हो या अट्टहास करते हो तब श्वास धीरे धीरे कम होने लगता है। प्राणायाम आप से आप आ जाता है। शीर्षासन करने वाले योगियो को प्राणायाम आप से आप आ जाता है। इन उदाहरणो से यह स्पष्ट प्रमाणित होता है कि, जब मन किसी बात पर एकाग्र रहता है, तब श्वास धीमी चलकर, बंद हो जाती है। प्राणायाम आप स आप होने लगता है। मन और प्राण का सम्बन्ध अति गाढ़ है। प्राण मन का बाह्य आवरणवस्त्र है। यदि तुम उस समय अपने श्वास पर ध्यान दो तो देखोगे कि वह अपनी अवस्था पर आ गया है। प्राणायाम उन लोगों को बहुत शीघ्र आता है जो कि सदा जप ध्यान, ब्रह्मविचार या आत्मविचार मे मग्न रहते हैं।

प्राण, मन और वीर्य का एक सम्बन्ध है। यदि तुम मन को रोक सकते हो तो प्राण और वीर्य आप स आप रुक जायगे। यदि तुम प्राण को रोक सकते हो तो मन और वीर्य आप से आप रुक जायेंगे। यदि तुम १ वर्ष तक वीर्य का एक बिन्दु भी पतन न करते हुए अखण्ड ब्रह्मचारी रह सकते हो तो मन और प्राण आप स आप रुक जायेंगे। जिस प्रकार वायु और अग्नि से सम्बन्ध है उसी प्रकार प्राण और मन से। वायु अग्नि को वर्धित करता है। प्राण मन को बढ़ाता है। यदि वायु

से प्राण खींच रहे हो। तब दाहिने हाथ की अनामिका और कनिष्ठिका अंगुलियों से वाम नासारन्ध्र बन्द करो। बारह बार ओम् कहते हुए श्वास स्थिर रखो। त्रिपटल कमलवन मूलाधार चक्र में श्वास को रीढ़ से पहुँचाओ। ध्यान करो कि श्वासधारा चक्र छूती है तथा कुण्डलिनी को जाग्रत करती है। छः बार ओम् कहते हुए दक्षिण नासारन्ध्र से धीरे धीरे वायु को निकालो। इसी प्रकार उन्हीं विधियों का प्रयोग तथा ध्यान करते हुए दक्षिण नासारन्ध्र से प्राणायाम को दोहराओ। इस प्राणायाम से कुण्डलिनी बहुत शीघ्र जाग्रत होती है। इस क्रिया को तीन बार सवेरे और तीन बार शाम को करो। अपनी शक्ति और कार्यकुशलता के अनुसार संख्या और समय को धीरे धीरे बढ़ाओ। इस प्राणायाम में मूलाधार चक्र पर एकाग्र ध्यान रखना बहुत आवश्यक है। यदि एकाग्रता अत्यधिक है और प्राणायाम नित्य किया जाता है तो कुण्डलिनी बहुत शीघ्र जाग्रत होगी।

ध्यानावस्था में प्राणायाम

यदि तुम एकाग्रता और ध्यान का अभ्यास करोगे तो प्राणायाम आप से आप आ जायगा। श्वास धीरे धीरे कम होता जाता है। हम सब इस प्राणायाम को रोज अनजाने करने लगते हैं। जब तुम कोई सनसनीदार कहानी की पुस्तक पढ़ते हो अथवा गणित का कोई सवाल करते हो तब तुम्हारा मन बिल्कुल उसीमें लीन हो जाता है। यदि तुम उस समय श्वास

पर ध्यान दोगे तो तुम देखोगे कि तुम्हारा श्वास बहुत धीमा चल रहा है। जब तुम कोई दुःखपूर्ण नाटक या सिनेमा देखते हो, जब तुम कोई दुःखमयी या सुखमयी वार्ता सुनते हो, शोकाश्रु या आनन्दाश्रु बहाते हो या अट्टहास करते हो तब श्वास धीरे धीरे कम होने लगता है। प्राणायाम आप से आप आ जाता है। शीर्षासन करने वाले योगियों को प्राणायाम आप से आप आ जाता है। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट प्रमाणित होता है कि, जब मन किसी बात पर एकाग्र रहता है, तब श्वास धीमी चलकर, बन्द हो जाती है। प्राणायाम आप से आप होने लगता है। मन और प्राण का सम्बन्ध अति गाढ़ है। प्राण मन का बाह्य आवरणमात्र है। यदि तुम उस समय अपने श्वास पर ध्यान दो तो देखोगे कि वह अपनी अवस्था पर आ गया है। प्राणायाम उन लोगों को बहुत शीघ्र आता है जो कि सदा जप, ध्यान, ब्रह्म विचार या आत्मविचार में मग्न रहते हैं।

प्राण, मन और वीर्य का एक सम्बन्ध है। यदि तुम मन को रोक सकते हो तो प्राण और वीर्य आप से आप रुक जायेंगे। यदि तुम प्राण को रोक सकते हो तो मन और वीर्य आप से आप रुक जायेंगे। यदि तुम १ वर्ष तक वीर्य का एक बिन्दु भी पतन न करते हुए अखण्ड ब्रह्मचारी रह सकते हो तो मन और प्राण आप से आप रुक जायेंगे। जिस प्रकार वायु और अग्नि में सम्बन्ध है उसी प्रकार प्राण और मन में। वायु अग्नि को वर्धित करता है। प्राण मन को बढ़ाता है। यदि वायु

न रो तो अग्नि या प्रकाश स्थिर हो जाता है। हठयोगी ब्रह्म को प्राणसंयम द्वारा प्राप्त करता है और राजयोगी ब्रह्म को मन-संयम से प्राप्त करता है।

इस प्राणायाम में तुम्हें नासारन्ध्र बंद करने की आवश्यकता नहीं है। आसन लगा कर केवल श्वास बंद कर लो। शरीर को भूल जाओ और ध्यान में मग्न हो जाओ। यदि तुम इसे घूमते हुए करना चाहते हो तो केवल वायु को अन्दर ले जाकर बाहर निकाल दो।

चलते समय का प्राणायाम

सर को ऊपर कर, कन्धों को पीछे कर और छाती को फैला कर चलो। दोनों नासारन्ध्रों से तीन बार (प्रत्येक पद के लिये एक बार) 'ओम्' कहते हुए श्वास खींचो। बारह बार 'ओम्' कहने तक श्वास को रोके रहो। छः बार 'ओम्' कहते हुए हवा को धीरे से बाहर निकाल दो। बारह बार 'ओम्' कहते हुए एक प्राणायाम के बाद विश्राम लो। यदि पद पद पर 'ओम्' नहीं कह सकते तो बिना पद ध्यान के 'ओम्' कहो।

चलते चलते कपालभाति भी किया जा सकता है। जो अत्यन्त कार्य-निमग्न रहते हैं, वे प्रातः और सायंकाल के पर्यटन के समय उपर्युक्त प्राणायाम कर सकते हैं। यह एक ढेले से दो पक्षियों को मारने की तरह है। खुले मैदान में चलते हुए तथा शीतल वायु के बहते समय यदि इस प्राणायाम को करोगे तो तुम्हें बहुत आनन्द प्राप्त होगा। तुम्हारी स्मृति और बल बहुत शीघ्र बढ़

जावेंगे। इस प्राणायाम का लाभ परिश्रम ध्यान, विचार और कार्य रूप मे परिणत करने योग्य है। जो 'ओम्' कहते हुए तेजी से चलते हैं वे बिना परिश्रम के प्राणायाम आप से आप कर लेते हैं। हृषीकेश के श्रीगंगाशंकरजी इसे प्रतिदिन करते हैं।

शवासन प्राणायाम

आराम से कम्बल के ऊपर लेट जाओ। हाथों को दोनों तरफ और पैरो को सीधा रखो। घुटने पास पास रहने चाहिए। चाहे पैर के अँगूठे दूर दूर हो। पसलियो और नसों का ढीला कर दो। जो बहुत कमजोर हैं वे इसी अवस्था मे—जमीन या बिछौने पर—पड़े हुए प्राणायाम करें। दोनों नासारन्ध्रो से बिना शब्द के धीरे से श्वास को खींचो। जब तक आराम के साथ साँस को रोक सकते हो रोको। तब दोनो नासारन्ध्रो से श्वास को बाहर निकाल दो। इस क्रिया को १२ बार सबेरे और १२ बार शाम को दोहराओ। अपने मन मे 'ओम्' कहते जाओ। यदि तुम चाहो तो 'सुखसाध्य प्राणायाम' भी इसी विधि से कर सकते हो। आसन, प्राणायाम, ध्यान और विश्राम मिलकर एक क्रिया का पूरा करते हैं। यह शरीर के साथ मन को भी शान्ति, सुख और आनन्द पहुँचाता है। यह वृद्ध पुरुषो के लिये बहुत उपयोगी है।

तालयुक्त प्राणायाम

स्त्री पुरुषो का श्वास लेना बहुत अनियमित है। साँस बाहर

फेंकते समय १६ मात्रा प्राण बाहर जाता है और अन्दर खींचते समय १२ मात्रा खींचा जाता है। इस प्रकार चार मात्रा की कमी रहती है। पर यदि तुम १६ अंश खींचो तो तुम तालयुक्त प्राणायाम कर सकते हो। तब कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होगी। तालमय प्राणायाम करने से तुम्हें वास्तविक आनन्द प्राप्त होगा। तुम श्वास प्रश्वास सम्बन्धी केन्द्र पर अधिकार प्राप्त कर सकते हो और उसके सहारे अन्य स्नायुओं को भी रोक सकते हो। इसका और नसों से पारस्परिक सम्बन्ध है। जिसके स्नायु शान्त हैं उसका मन भी शान्त रह सकता है।

यदि श्वास खींचने और छोड़ने की मात्रा बराबर हों तो तुम तालयुक्त प्राणायाम करोगे। यदि तुम ६ बार 'ओम' कहते हुए साँस खींचते हो तो ६ बार 'ओम' कहते हुए साँस को छोड़ भी दो। यह एक नियमबद्ध प्राणायाम है। इसके अभ्यास से सारा शरीर तालपूर्ण हो जाता है। शरीर, मन और इन्द्रियाँ एक तान मे आने से श्रमित नसो को आराम पहुँचावेगी। इससे तुम्हें पूर्ण शान्ति और आनन्द प्राप्त होगा। उत्थित अभिलाषाएँ शान्त हो जायँगी और आनन्द मिलेगा।

तालयुक्त प्राणायाम एक और प्रकार का होता है। चार बार 'ओम' कहते हुए दोनों नासारन्ध्रों से श्वास खींचो। आठ बार 'ओम' कहते हुए साँस को रोको। (आभ्यन्तरिक कुम्भक) चार बार 'ओम' कहते हुए साँस बाहर निकाल दो और आठ बार 'ओम्' कहते हुए साँस को बाहर रोको। (बाह्य कुम्भक)

अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार ऊपर बतलायी हुई क्रिया को कई बार करो। तुम श्वास खींचने और छोड़ने के समय को आठ 'ओम' से १८ 'ओम' तक बढ़ा सकते हो। पर तब तक बढ़ाने का प्रयत्न मत करो जब तक कि तुम यह न जान लो कि तुम में इसकी शक्ति है या नहीं। तुम्हें इसके करने में आनन्द और सुख प्राप्त होना आवश्यक है। तुम्हें कष्ट का अनुभव न होना चाहिए। ताल पर विशेष ध्यान दो। ताल श्वास की संख्याओं की अपेक्षा अधिक महत्त्व रखता है। तुम्हें सारा शरीर तालमय मालूम होना चाहिए। अभ्यास से तुम कुशल हो जाओगे। शान्ति और दृढ़ता की आवश्यकता है।

सूर्य-भेद

पद्मासन या सिद्धासन पर बैठ जाओ। आँखें बंद कर लो। वामनासारन्ध्र को दाहिने अंगूठे और अंगुलियों से बंद रखो। दक्षिण नासारन्ध्र से बिना कष्ट के जब तक हो सके साँस खींचो तब दाहिने अंगूठे से दक्षिण नासारन्ध्र को बंद कर दो और ठोढ़ी को छाती से मिलाते हुए साँस (जालन्धर बन्ध) को तब तक रोको जब तक कि पसीना नाखून के किनारे तथा बालों से न निकलने लगे। इस कोटि तक आरंभ में पहुँचना बहुत कठिन है। तुम्हें कुम्भक के समय को धीरे धीरे बढ़ाना होगा। यह सूर्य भेद कुम्भक को अन्तिम सीमा है। दक्षिण नासा रन्ध्र को अंगूठे से बंद कर, वामनासारन्ध्र से बिना शब्द, श्वास

को बाहर निकालो। साँस लेते, रोकते और निकालते समय 'शब्द' के साथ 'ओम्' का उच्चारण करो। रोकी हुई सास को ऊपर की तरफ जोर देते हुए खोपड़ी को शुद्ध करके श्वास को बाहर फेंको।

इस प्राणायाम को बार बार करना चाहिए क्योंकि यह मन को शुद्ध करता और वायु प्रकोप से उत्पन्न आँतो के कीटाणुओं और रोगों को दूर करता है। यह वायु से उत्पन्न चार प्रकार के रोगों को दूर करता और गठिया और वात रोग को अच्छा कर देता है। इसके अभ्यास से Neuralgia नामक रोग और इसके अन्य सजातीय रोग अच्छे हो जाते हैं। उपरोक्त प्राणायाम के अभ्यास से अनेक रोगों के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं, मृत्यु और अवनति की गति रुक जाती है और कुण्डलिनी शक्ति के जगने से जठराग्नि प्रदीप्त होता है।

उज्जायी

पद्मासन या सिद्धासन लगा कर बैठ जाओ। मुह बंद कर लो। दोनों नासारन्ध्रों से शान्तिपूर्वक धीरे धीरे साँस लेकर गले से हृदय तक वायु से पूरित करो।

जितनी देर तक सुगमतापूर्वक रोक सको साँस को रोके रहो। फिर दहिने अंगूठे से दहिना नासारन्ध्र बंद कर के बाएँ नासारन्ध्र से साँस धीरे धीरे निकाल दो। साँस खींचते समय छाती खूब फुलाओ। श्वासनलिका के कुछ बंद रहने से साँस लेने के समय एक विचित्र प्रकार का शब्द होता है। यह शब्द जोकि

रेचक करते समय होता है, एकसा और मन्द होना चाहिए। यह बराबर होता रहना चाहिए। कुम्भक का अभ्यास चलते फिरते या खड़े होते समय भी करते रहना चाहिए। वाम नासारन्ध्र से रेचक करने की जगह दोनों नासारन्ध्र खुले रखकर धीरे धीरे करना चाहिए।

ऐसा करने से सिर की गरमी कम होती है। अभ्यासकर्त्ता के शरीर और चेहरे पर सुन्दरता आ जाती है। जठराग्नि प्रदीप्त होता है। जलोदर तथा धातुक्षय जनित शरीर के सब रोग दूर होते हैं। गले की खराश दूर होती है, दमा तथा तपैदिक की जाति व शरीर का घुलाघुलाकर मारने वाले सब रोग, अच्छे होते हैं। हृदय के सब तरह के रोग और वे रोग जो शरीर में ओषजन की पर्याप्त मात्रा न पहुँचने से पैदा होते हैं, अच्छे हो जाते हैं। उज्जायी प्राणायाम के अभ्यास से सब काम सिद्ध होते हैं। उज्जायी प्राणायाम के अभ्यास करने वाले को कफजनित रोग, स्नायु सम्बन्धी रोग, कुपच, पेचिश, तिल्ली का बढ़ना, क्षयी, खाँसी या बुखार आदि नहीं होते। काल और व्यथा पर विजय प्राप्त करने के लिए, उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

शीतकरी

जीभ को इस प्रकार मोड़ो कि उसका सिरा तालु से लगा रहे और फिर मुह से सिसकारी भरते हुए साँस खींचो। यथा

शक्ति साँस को रोककर दोनों नासारन्ध्रों से साँस निकाल दो। उपरोक्त रीति से साँस लेते समय दाँती भिर्ची रहनी चाहिए।

इस प्राणायाम को शीतकरी कहते हैं। इसका अभ्यास करने से अभ्यासकर्ता में सुन्दरता बढती है और शरीर में स्फूर्ति आती है। उसके अभ्यास से भूख, प्यास, सुस्ती और तन्द्रा का नाश होता है। अभ्यासकर्ता इन्द्र के समान बलवान और योगेन्द्र हो जाता है।

वह बहुत से अलौकिक काम कर सकता है। वह अजेय और स्वतन्त्र हो जाता है। कोई चोट उस पर असर नहीं करेगी। जब तुम्हें प्यास लगे तब इसका अभ्यास करो, शीघ्र ही प्यास दूर हो जावेगी।

शीतली

जीभ को मोड़कर नली की तरह बनाओ ओठ के बाहर थोडा निकालो। सीटी सी बजाते हुए यथाशक्ति अधिक से अधिक श्वास खींचो। जब तक आराम से रोक सको, साँस रोको। उसके बाद दोनों नासारन्ध्रों से धीरे धीरे, निकाल दो।

इस प्राणायाम को शीतली कहते हैं। इस प्राणायाम का अभ्यास नित्य प्रातःकाल पन्द्रह से तीस बार तक करना चाहिए। इस प्राणायाम का अभ्यास पद्मासन, सिद्धासन, तथा वज्रासन लगाकर या चलते फिरते भी करना चाहिए।

इस प्राणायाम के अभ्यास से रक्त शुद्ध होता है। भूख और

प्यास इसके अभ्यास से शान्त होती है और शरीर शीतल होता है। इसके अभ्यास से गुल्म, सीहा और बहुत से राजरोगों का जोर, बुखार, तपैदिक, कुपच, पित्तजनित विकार, कफ से पैदा होने वाले रोग, साँप के काटने और जहर खाने के दोष दूर होते हैं। किसी जंगल में अगर तुम ऐसी जगह पड़ जाओ जहाँ प्यास लगने पर पानी न मिले तो इस प्राणायाम का अभ्यास करने से प्यास तुरन्त शान्त हो जावेगी। इस प्राणायाम के अभ्यास करने वाले पर साँप और बिच्छू का जहर नहीं चढ़ता। शीतली कुम्भक सर्प के साँस लेने की नकल है। इस प्राणायाम का अभ्यास करने वाला कायाकल्प कर सकता है और वायु, जल तथा अन्न का कष्ट सरलतापूर्वक सहन कर सकता है। सब तरह की जलन और ज्वर शीतली कुम्भक के अभ्यासकर्ता को किसी प्रकार का कष्ट नहीं पहुँचा सकते।

भस्त्रिका

भाती या धोंकनी को संस्कृत में भस्त्रिका कहते हैं। भाती की तरह जोर जोर से साँस लेना और निकालना भस्त्रिका प्राणायाम का विशेष लक्षण है। भस्त्रिका के अभ्यासकर्ता को लुहार की भाती की तरह जोर के साथ और जल्दी जल्दी साँस लेना और निकालना पड़ता है।

पद्मासन लगाकर बैठ जाओ। धड़, गर्दन और सिर को एक सीध में रखो। मुँह को बंद रक्खो। लुहार की भाती की

तरह बीस बार जल्दी जल्दी, जोर के साथ साँस ला और छाडो। इस प्राणायाम का अभ्यास करते समय फुफकारने की सी आवाज निकलती है। अभ्यासकर्ता को इस प्राणायाम का अभ्यास शीघ्रातिशीघ्र साँस लेने और छोडने के साथ आरम्भ करना चाहिए। जब अभ्यास के नियमित बीस रेचकों की आवृत्ति पूरी हो जाय तब अन्तिम रेचक के बाद गहरी मे गहरी एक साँस लेना चाहिए। इस गहरी साँस को आराम के साथ अधिक से अधिक जितना रोका जा सके रोकना चाहिए। उसके बाद धीरे धीरे साँस को निकाल देना चाहिए। इस गहरी साँस को निकाल देने के बाद भस्त्रिका की एक आवृत्ति पूरी होती है। थोडी सी मामूली साँसें लेते हुए भस्त्रिका की एक आवृत्ति करने के बाद थोडा आराम कर लो। ऐसा करने से तुम्हे कुछ आराम मिलेगा और दूसरी आवृत्ति के लिए तुम तैयार हो जाओगे। रोज सवेरे भस्त्रिका की तीन आवृत्तियाँ करनी चाहिए। शाम को भी ऐसी ही तीन आवृत्तियाँ की जा सकती है। कामकाजी आदमियों के लिए नित्य भस्त्रिका की तीन आवृत्तिया करना कठिन है अत कम स कम एक आवृत्ति उन्हे अवश्य करनी चाहिए। इतने स भी उनका शरीर ठीक रहेगा।

भस्त्रिका बलशाली व्यायाम है। कपालभाती और उज्जायी के सयोग का ही नाम भस्त्रिका है। ऐसा समझ लेने से भस्त्रिका की कठिनता दूर हो जाती है। भस्त्रिका के अभ्यास करने स पूर्व कपालभाती और उज्जायी का अभ्यास कर लेना चाहिए।

बहुत से लोग जब तक थकते नहीं तब तक भस्त्रिका का अभ्यास करते रहते हैं। भस्त्रिका का अभ्यास करने से पसीना छूट आता है। बहुत अभ्यास करते करते घिग्घी बँधने लगे तो थोड़ी देर के लिये अभ्यास स्थगित करके साधारण साँसें लेकर आराम करना चाहिए। जब चित्त ठिकाने आ जाय तब फिर अभ्यास शुरु करना चाहिए। जाड़े के दिनों में सबेरे और शाम दोनों समय भस्त्रिका का अभ्यास किया जा सकता है। गर्मियों में ठंडक के समय सबेरे ही अभ्यास करना चाहिए।

भस्त्रिका का अभ्यास करने से गले की सूजन, दूर हो जाती है, जठराग्नि प्रदीप्त होता है, कफ का विकार नष्ट होता है, नाक और छाती की बीमारियाँ दूर होती हैं और दमा तथा क्षयी आदि रोग अच्छे हो जाते हैं। भूख अच्छी लगती है। ब्रह्म, विष्णु और रुद्र नामक तीनों ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं। सुषुम्ना अर्थात् ब्रह्मनाडी के द्वार को बंद रखने वाला कफ रूपी जो मल है वह भस्त्रिका के अभ्यास से नष्ट हो जाता है। भस्त्रिका द्वारा कुण्डलिनी का ज्ञान हो जाता है। वात, पित्त और कफ के बढ़ने से जो रोग उत्पन्न होते हैं वे सब भस्त्रिका के अभ्यास से दूर हो जाते हैं। इसके अभ्यास से शरीर में गर्मी आती है। जब कभी किसी ठंडी जगह में पहुँच जाओ और कपड़े कम हों तो भस्त्रिका का अभ्यास करो तो शीघ्र शरीर में गर्मी आ जायेगी। भस्त्रिका के अभ्यास से नाड़ियाँ शीघ्र शुद्ध हो जाती हैं। भस्त्रिका का कुम्भक सर्वश्रेष्ठ

माना गया है। भस्त्रिका के कुम्भक का विशेष रूप से अभ्यास करना चाहिए क्योंकि इसके अभ्यास से सुषुम्नाश्रित उपरोक्त तीनों ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं। इसके अभ्यास से कुण्डलिनी शीघ्र जाग जाती है। भस्त्रिका के अभ्यास करने वाले को कभी भी कोई रोग नहीं होता और वह सदा स्वस्थ रहता है।

अभ्यासकर्त्ता की योग्यता और क्षमता के अनुसार भस्त्रिका के अभ्यास की आवृत्तियाँ निश्चित होती हैं। अभ्यास में अति करना ठीक नहीं। कोई अभ्यासकर्त्ता आरम्भ मे ही ६ से १२ आवृत्ति तक कर उठते हैं।

निम्नलिखित रीति से भस्त्रिका का अभ्यास करना चाहिए। इस नियम के अन्त मे थोड़ा परिवर्तन है। बीस बार जल्दी जल्दी रेचक और पूरक करने के उपरान्त दक्षिण नासारन्ध्र से पूरक करके आराम से यथाशक्ति जितनी देर कुम्भक कर सको करो और फिर वाम नासारन्ध्र से धीरे धीरे रेचक कर दो। फिर वाम नासारन्ध्र से पूरक करके यथाशक्ति कुम्भक करने के बाद दक्षिण नासारन्ध्र से रेचक कर दो। इस पूरे अभ्यास मे भावार्थ सहित प्रणव का जप करते रहो।

भस्त्रिका के कुछ ऐसे भी प्रकार हैं, जिनमें केवल एक नासारन्ध्र से साँस ली जाती है और अन्य प्रकारो में रेचक और पूरक क्रम से भिन्न भिन्न नासारन्ध्रों से किये जाते हैं।

भ्रामरी

पद्मासन या सिद्धासन लगाकर बैठ जाइये। अब पूरक और रेचक जल्दी जल्दी कीजिए। पूरक और रेचक जल्दी जल्दी करने में शहद की मक्खी की तरह भनभनाहट होनी चाहिए।

इस तरह शीघ्रता से पूरक रेचक तब तक करना चाहिए जब तक कि सारे शरीर स पसीना न चूने लगे। अन्त में दोनों नासारन्ध्रों से एक खूब गहरी साँस लो और आराम से जितनी देर रोक सको उस साँस को रोके रहो। अन्त में धीरे धीरे दोनो नासारन्ध्रों से साँस को निकाल दो। इस कुम्भक मे जो *आनन्द अभ्यासकर्त्ता को आता है वह असीम और वर्णनातीत* है। अभ्यास के आरम्भ में रक्त सचार बढने से शरीर मे गर्मी बढती है। किन्तु पसीना आने से शरीर ठंढा हो जाता है। भ्रामरी कुम्भक का अच्छी तरह अभ्यास हो जाने से अभ्यास-कर्त्ता को समाधि लगाने मे सफलता मिलती है।

मूर्छा

आसन लगा कर पूरक करो। साँस यथाशक्ति रोक रहो। ठोढी को छाती से लगाकर जालन्धर बन्ध करो। साँस तब तक रोके रहो जब तक कि बेहोशी न मालूम हो। जब बेहोशी सी आने लगे तब धीरे धीरे रेचक करो। मस्तिष्क की बेहोशी द्वारा आनन्द प्राप्त कराने से उपरोक्त कुम्भक को मूर्छा कहते हैं।

यह कुम्भक केवल व्यक्ति विशेषों के लिए ही लाभदायक है। सब के लिए नहीं।

प्लाविनी

इस प्राणायाम के अभ्यास में चतुराई की आवश्यकता है। इस प्लाविनी कुम्भक का अभ्यास करने वाला जलस्तम्भ कर सकता है और यथेच्छित समय तक जल पर बिना डूबे रह सकता है। इस कुम्भक के एक ऐसे अभ्यासकर्ता को हम जानते हैं जो लगातार १२ घंटे तक जल पर लेटे रह सकते हैं। जो लोग प्लाविनी कुम्भक का अभ्यास करते हैं, कुछ दिनों तक लगातार बिना अन्न के केवल वायु पीकर रह सकते हैं। अभ्यासकर्ता पानी की तरह वायु को पीकर पेट में पहुँचाता है। वायु भरने से पेट थोड़ा फूल उठता है। जब पेट वायु से भरा रहता है, तब उसे उँगली से बजाने पर टनकार की आवाज निकलती है। नियमपूर्वक अभ्यास करने की आवश्यकता है। यही नहीं बल्कि इस प्राणायाम का अभ्यास ऐसे मनुष्य की देख-रेख में करना चाहिए जो इस प्राणायाम में निष्णात हो। अभ्यास-कर्त्ता पेट की हवा को डकार द्वारा बाहर निकाल सकता है।

केवल कुम्भक

सहित और केवल नाम से कुम्भक के दो भेद हैं। पूरक और रेचक के संयोग वाले कुम्भक की संज्ञा सहित है। इन दोनों क्रियाओं से रहित जो कुम्भक है, उसका नाम "केवल" है।

सहित कुम्भक का पूर्ण अभ्यास होने से ही केवल कुम्भक का अभ्यास किया जा सकता है। जब अधिक अभ्यास के बाद सहित कुम्भक महीनों और वर्षों और बहुत स्थानो में बिना पूरक और रेचक के स्थान, काल और संख्या स रहित होकर होने लगती है तभी उस कुम्भक को विशुद्ध केवक कुम्भक अर्थात् प्राणायाम का चतुर्थ प्रकार कहते हैं। इस अन्तिम प्रकार के प्राणायाम के सिद्ध हो जाने पर अभ्यासकर्ता अद्भुत रूप से आकाश में भ्रमण करने लगता है। वशिष्ट संहिता म लिखा है कि "जब पूरक आर रेचक किये बिना ही, अभ्यासकर्ता आराम से साँस रोके रह सके, तभी इस कुम्भक को केवल कहते हैं"। इस प्राणायाम में बिना पूरक या रेचक किये साँस सहसा रोक ली जाती है। इस कुम्भक द्वारा अभ्यासकर्ता अपनी इच्छानुसार देर तक साँस रोके रह सकता है। अब वह राजयोगी हो जाता है। केवल कुम्भक द्वारा कुण्डलिनी का ज्ञान होता है। कुण्डलिनी जागृत हो जाती है और सुषुम्ना की सब रुकावटें दूर हो जाती हैं। इस तरह हठयोग के अभ्यास में अभ्यासकर्ता पूर्ण हो जाता है। इस कुम्भक का अभ्यास दिन में तीन बार किया जा सकता है। सच्चा योगी वही है जिसे प्राणायाम और केवल कुम्भक का पूर्ण ज्ञान है। इस केवल कुम्भक को जिसने सिद्ध कर लिया वह तीनो लोकों में जो चाहे सो कर सकता है। ऐसी महान आत्माएं धन्य हैं। इस कुम्भक के अभ्यास स आयु बढती है और अभ्यासकर्त्ता को कोई रोग नहीं होता।

प्राण चिकित्सा

जो प्राणायाम का अभ्यास किया करते हैं, अपने प्राण के सचार द्वारा बडे बडे रोगों को अच्छा कर सकते हैं। रोगी अगो मे प्राण का सञ्चार करने के उपरान्त कुम्भक के अभ्यास द्वारा प्राण की कमी को पूरा कर सकते हैं। अपने प्राणों से दूसरे का लाभ पहुँचाने का यह मतलब नही है कि, तुममें प्राण की कमी हो जायगी। जितना अधिक प्राण तुम दूसरे को दोगे उतनी ही अधिक मात्रा में प्राण के अनन्त भण्डार हिरण्यगर्भ से तुम्हारे शरीर में प्राण का सञ्चार होगा। यह प्रकृति का नियम है, अत इस काम में कजूसी से काम लेने की आवश्यकता नही है। एक गठिया के रोगी के रुग्ण पैरो को हाथ से सहलाओ। सहलाते समय कुम्भक करो और विचार करो कि, प्राण तुम्हारे हाथो से होकर रोगी की टागों में जा रहा है। हिरण्यगर्भ अर्थात प्राण के अनन्त भण्डार से अपना सम्बन्ध विचार द्वारा लगाए रहो और विचार करो कि हिरण्यगर्भ से प्राण की अनन्त धारा तुम्हारे शरीर मे आ कर हाथों द्वारा रोगी के शरीर मे प्रवेश कर रही है। रोगी को तुरन्त लाभ होगा, और वह सबल हो उठेगा। सिर दर्द, उदर पीडा (Colic) तथा अन्य तात्कालिक व्याधियाँ तुम्हारे चुम्बक जैसे हाथों से लगते ही सुहलाते सुहलाते अच्छे हो जायँगे। प्लीहा (Fever) तिल्ली, उदर आदि शरीर के अङ्गों को सुहलाते समय उन रोगाक्रान्त अङ्गविशेषों को सम्बोधन कर के कहते जाओ

कि "हे, रोगी अङ्ग मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ कि तुम रोग से मुक्त हो कर अपने कर्त्तव्य का ठीक ठीक पालन करो।" वे अङ्ग तुम्हारी आज्ञा का पालन करेंगे—ध्यान रहे कि उन अङ्गों में ज्ञान होता है। दूसरों में प्राण-सचार करते समय प्रणव का उच्चारण करते रहो। कुछ रोगियों पर इसको आजमाओ। तुममें कुशलता आ जावेगी। तुम बिच्छू काटे को तुरन्त अच्छा कर सकते हो। धीरे धीरे सुहलाते हुए टाँग में नीचे जहर उतार दो।

प्राणायाम का नित्य अभ्यास करने से गजब की ध्यान शक्ति, दृढ इच्छाशक्ति और सुन्दर, स्वस्थ तथा दृढ शरीर प्राप्त हो सकता है। तुम्हें जानबूझ कर शरीर के रुग्ण अग में प्राण का सचार करना होगा। मान लो कि तुम्हारा प्लीहा (spleen) ठीक काम नहीं करता। पद्मासन लगा कर बैठ जाओ। आँखें बन्द कर लो। जितनी देर में तीन बार प्रणव का उच्चारण हो सके धीरे धीरे पूरक करो। तब ६ बार प्रणव के उच्चारण में जितना समय लगे सांस को रोके रहो, अब प्लीहा पर प्राण का सचार करो। अपना ध्यान वहीं जमाए रहो। मन उस स्थान से हटने न पाए। ऐसा विचार करो कि प्राण रुग्ण प्लीहा के रेशे रेशे में भिद रहा है और उसका रोग दूर हो रहा है। अस्वस्थ अगों में प्राण का सचार करते समय ध्यान, विश्वास और मन का सयम उस अङ्ग को अच्छा करने में महत्वपूर्ण काम करते हैं। अब धीरे धीरे रेचक द्वारा साँस निकाल दो। रेचक करते समय विचार करो कि प्लीहा का रोग और अशुद्धताएं बाहर जा

रही हैं। यह क्रिया बारह बार सबेरे और बारह बार शाम को करनी चाहिए। थोडे दिनो में प्लीहा की सुस्ती दूर हो जायगी। यह बिना दवा दारू का इलाज है। यही सच्ची प्रकृति चिकित्सा है। तात्कालिक या प्राचीन कैसा भी रोग क्यो न हो प्राणायाम करते समय शरीर के किसी भी अङ्ग म तुम प्राण का सचार कर के उस अच्छा कर सकते हो। एक दो बार स्वय अपनी चिकित्सा करो। तुम्हे अपने आप विश्वास हो जायगा। पास मे मक्खन होने पर भी जो घी घी खोजती है, उसी तरह सर्वदा प्राप्य, सस्ती और लाभकारी प्राण रूपी औषध पास मे रह कर भी इधर उधर मारे मारे घूमना ठीक नही। इसका उपयोग समझ बूझ कर करो। अभ्यास और ध्यान की उन्नति होने से केवल स्पर्श मात्र से ही तुम बहुत से रोग अच्छे कर सकते हो। और भी उच्चावस्था मे पहुँचने स केवल इच्छा शक्ति से ही मनुष्य रोग अच्छा कर सकता है।

दूर से अच्छा करना

दूर स चिकित्सा करने को अनुपस्थित-चिकित्सा भी कहते हैं। आकाश द्वारा अपना प्राण तुम दूर स्थित मित्र के पास भेज सकते हो। उसकी भी मनोवृत्ति ग्राहक होनी चाहिये। दूर चिकित्सा के नियमानुसार दूरस्थ रोगी के साथ तुम्हारा सीधा और सहानुभूतिपूर्ण सम्बन्ध रहना चाहिए।

पत्रव्यवहार द्वारा उनके साथ अपना समय निर्धारित कर

लेना चाहिए। उन्हें पत्र द्वारा सूचना दे देनी चाहिए कि "अमुक समय पर तैयार रहना। उस समय अपनी मनोवृत्ति ग्राहक रखना। एक आराम कुर्सी पर लेटे रहना। आँखें बद रखना उस समय हम प्राण भेजेंगे।" निर्धारित समय पर रोगी को सम्बोधित करके कहो "मैं प्राण भेज रहा हूँ।" प्राण भेजने के समय कुम्भक करो। उस समय तालपूर्ण साँस लो। मन में ऐसा विचार करो कि रेचक करते समय प्राण निर्धारित रोगी के पास जा रहा है। दूरी लाँघ कर प्राण रोगी के शरीर में प्रविष्ट हो रहा है। बेतार अर्थात रेडियो की लहर की तरह विद्युत गति से आकाश में होकर प्राण यात्रा करता है। चिकित्सक के विचार से रँगे हुए प्राण का बाह्य रूप नुकीला होता है। प्राण भेजने के बाद कुम्भक करके फिर तुम शरीर मे प्राण का सचार कर सकते हो। इस तरह करने के लिए लबे, स्थिर और सयमपूर्ण अभ्यास की आवश्यकता होती है।

शिथिलीकरण

शरीर की मासपेशियों को ढीला करने का अभ्यास करने से शरीर और मस्तिष्क दोनों को विश्राम मिलेगा। मास पेशियों का तनाव कम हो जायगा। जो लोग शिथिलीकरण विज्ञान को जानते हैं, उनकी शक्ति कभी क्षय नही होती। वे बीचबिचाव अच्छा कर सकते हैं। कुछ गहरी साँसें लेकर शवासन में चित्त लेट जाओ। सिर से पैर तक की सारी मास पेशियों को ढीला

कर दो। एक तरफ करवट कर के लेट जाओ और जितना उस तरफ के अङ्गों को ढीला कर सको ढीला कर दो। मास-पेशियों पर बिल्कुल जोर मत दो। इसी तरह दूसरी तरफ करवट लेकर उधर के अङ्गों को ढीला करो। सोते मे अनजाने सभी ऐसा करते हैं। शरीर के विशेष अङ्गों की विशेष मासपेशियों के भिन्न भिन्न अभ्यास हैं। सिर, कधे, बाँहें, बाजू, कलाई, उङ्गलियाँ, जाँघें, टागे, टखने, पैर के अगूठे, कुहनियाँ और घुटने आदि सभी ढीले किये जा सकते हैं। योगी लोग इस शिथिलीकरण विद्या को अच्छी तरह जानते हैं। इन भिन्न भिन्न अङ्गों को ढीला करने वाले अभ्यासों को करते समय मन को शान्त और दृढ रखना चाहिए।

मन को शिथिल करना

क्रोध और चिन्ता के भावों को नष्ट करने से मानसिक शान्ति प्राप्त की जा सकती है। चिन्ता और क्रोध के मूल में भय की स्थिति है। चिन्ता और क्रोध से कुछ लाभ तो होता नहीं, किन्तु इन दोनों निम्न श्रेणी के भावों में आकर व्यर्थ ही बहुत सी शक्ति का क्षय हो जाता है। जो आदमी चिन्तित रहता है और उस पर कहाँ वह चिडचिडा हुआ तो यह उसकी निर्बलता का लक्षण है। अत मनुष्य को विवेकपूर्वक विचारशील होना चाहिए। अनावश्यक चिन्ताओं से अलग रहना चाहिए। मासपेशियों के शिथिल करने का प्रभाव मन पर पडता है।

शरीर शिथिल होने से मन को शान्ति मिलती है। मन शान्त होने से शरीर को विश्राम मिलता है। मन और शरीर का घनिष्ट सम्बन्ध है। शरीर मन ही की सृष्टि है, जो मन अपने सुख के लिए उत्पन्न करता है।

शरीर को ढीला करके आराम के साथ एक आसन पर १५ मिनिट तक बैठो। अपनी आँखें बंद कर लो। बाह्य पदार्थों से मन को हटा लो। मन को स्थिर करो। विचारधारा को बंद करो। ऐसा विचार करो कि यह शरीर नारियल के छिल्के की तरह है और तुम शरीर से अलग हो। ऐसा समझो कि शरीर एक तरह का पात्र है जो तुम्हारे हाथों में है। सर्वव्यापक आत्मा के साथ अपना एकीकरण करो। ऐसा समझो कि अपार आत्म महासागर में सारा संसार और तुम्हारा शरीर तिनके की तरह बह रहे हैं। अपने को उस समय सर्वशक्तिमान से सम्बन्धित समझो। ऐसा समझो कि सारे संसार का जीवन तुम्हारे द्वारा सञ्चारित हो रहा है। ऐसा समझो कि जीवन महासागर के वक्ष पर तुम आनन्दपूर्वक बह रहे हो। इसके बाद आँखें खोल दो। अब तुम अपने में महान मानसिक शक्ति, मानसिक स्फूर्ति, और मानसिक बल प्राप्त करने का अनुभव करोगे। उपरोक्त अभ्यास नियमपूर्वक करके आनन्द का अनुभव लो।

प्राणायाम का महत्व और लाभ

"संसार में अनेक बार जन्म ग्रहण करने से जो मिथ्या

सांसारिक वासनाएँ उत्पन्न हो जाती हैं वे सब बिना दीर्घकालीन योगाभ्यास के नष्ट नहीं होतीं विधिपूर्वक नियम से दीर्घ काल तक बिना अभ्यास किये मन को वश मे लाना असम्भव है।"
मुक्तिकोपनिषद

"बिना योगाभ्यास किये मुक्ति प्राप्त कराने वाला ज्ञान कैसे उदय हो सकता है ? ज्ञान रहित योगाभ्यास मोक्ष प्राप्त कराने मे असमर्थ है। अत मुमुक्षु को दृढतापूर्वक योगाभ्यास और ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।"
योगतत्व उपनिषद

"तत. क्षीयते प्रकाशावरणम्" अर्थात तब प्रकाश को ढके रहने वाला आवरण नष्ट होता है। (योग सूत्र २—५२)

रजोगुण और तमोगुण ही आवरण कहे गये हैं। प्राणायाम के अभ्यास से इन आवरणों का नाश होता है। आवरण के नष्ट होते ही आत्मा की प्रकृति का ज्ञान होता है। चित्त स्वय तो सात्विक अणुओं का बना होता है, किन्तु रजो और तमोगुणों से वैसे ही ढका रहता है, जैसे अग्नि धुएँ से। प्राणायाम से बढ कर शुद्ध करने वाली क्रिया दूसरी नही है। प्राणायाम द्वारा शुद्धि होने के उपरान्त ज्ञान रूपी प्रकाश चमक उठता है। 'योगी के कर्म, जो उसकी विवेक बुद्धि को ढके रहते हैं, प्राणायाम के अभ्यास से नष्ट हो जाते हैं। अनन्त कामनाओं का जादू मुख्य तत्व को, जो स्वाभाविक ही ज्योतिर्मय है, छिपाये रहता है और व्यष्टि आत्मा को पापों की तरफ प्रेरित करता रहता है। योगी का यह सञ्चित कर्म रूपी आवरण, जो ज्ञान

ज्योति को ढँके रहता है और जिसके कारण जीव निरन्तर आवागमन के चक्र में फँसा रहता है, प्राणायाम के अभ्यास से प्रतिक्षण पतला होता जाता है और अन्त में प्राणायाम का अभ्यास कर्मबन्धन को काट बहाता है। वाचस्पति के अनुसार पाप और शारीरिक क्लेश ही जीव के बन्धन था ज्ञान ज्योति के आवरण हैं।

मनु का कहना है कि "प्राणायाम द्वारा पापों का क्षय करो।" विष्णु पुराण में 'प्राणायाम को योग का उत्कृष्ट साधन बतलाया गया है। जो अभ्यास द्वारा प्राण नामक वायु को प्राप्त करना चाहता है, उस प्राणायाम का सहारा लेना चाहिए।" 'धारणासु योग्यता मनसः" मन ध्यान के योग्य हो जाता है (योग सूत्र २—५२)। ज्योति के ऊपर वाले आवरण के हटते ही मन अपने आप एकाग्र होने लगेगा। विक्षेपकारक कारणों के हटते ही वायु रहित स्थान में रहने वाली अखण्ड ज्योति के समान मन स्थिर और एकाग्र हो जायगा। प्राणायाम कभी कभी पूरक, कुम्भक और रेचक तीनों क्रियाओं का बोधक होता है और कभी कभी अलग अलग क्रिया को लोग प्राणायाम समझने लगते हैं। प्राणवायु जब आकाश तत्व में विचरण करेगा, तब साँस पतली चलेगी। इस समय साँस रोकना सहल हो जाता है। प्राणायाम द्वारा मन की चञ्चलता कम हो जायगी और वैराग्य स्वतः उत्पन्न होगा।

साँस की गति में एक इंच की कमी कर सको तो भविष्य की बात बताने की शक्ति तुममें आ जाय। दो इंच साँस की

चाल कम हो जाने से दूसरों के मन की बात जानने की शक्ति आ जाती है। तीन इंच घटाने से लघिमा, चार इंच घटाने से आकाश-विहारी सिद्धों का दर्शन और बातचीत, पांच इंच घटाने से अलक्षित रूप से आकाश मे उड़ने की शक्ति, छः इंच घटाने से कायासिद्धि, सात इंच घटाने से परकाया-प्रवेश, आठ इंच घटाने से अमर यौवन, नौ इंच घटाने से देवतालोग वश मे आ जाते हैं। दस इंच घटाने से अणिमा महिमा आदि सिद्धियाँ और ११ इंच साँस की गति कम करने से परमात्मा से साक्षात्कार हो जाता है। जब अमित अभ्यास द्वारा योगी को पूरे तीन घंटे तक कुम्भक करने का अभ्यास हो जावे तो वह पैर के अंगूठे पर खड़ा रह सकता है। उसे सब सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। अग्नि जैसे इंधन जला डालती है वैसे ही प्राणायाम पापों के समूह को जला डालता है। प्रत्याहार द्वारा मन शान्त हो जाता है। धारणा द्वारा मन एकाग्र होता है और ध्यान द्वारा शरीर और संसार को अभ्यासकर्ता भूल जाता है। अन्त में समाधि लगने से अनन्त सुख, ज्ञान शान्ति और मुक्ति का लाभ होता है।

> "तालुम् तालु चक्रम् तत्र अमृत तद्धारा प्रवाहः
> घटिका मूलरंध्ररजतन्ति" ध्वनिनो निरञ्जनम्
> तत्र सयम ध्यायेत् चित्त लयो भवति॥"

योग-समाधि में नाभिस्थित योगाग्नि की शिखा शिर में पहुँच कर ब्रह्मरन्ध्र में स्थित अमृत को गला देती है। इस अमृत को

योगी बड़े प्रेम और चाव से पीता है। केवल इसी योगामृत को पी कर वह महीनों बिना खाये पीये जीवित रह सकता है।

शरीर दुबला, बलवान और स्वस्थ हो जाता है। शरीर की चर्बी गायब हो जाती है। चेहरे पर तेज आ जाता है। आँखों में हीरे की सी ज्योति आ जाती है। अभ्यासकर्त्ता बड़ा सुन्दर हो जाता है। वाणी मधुर और सुरीली हो जाती है। अनाहत शब्द सुनाई पडने लगते हैं। अभ्यासकर्त्ता सर्वप्रकार के रोगों से मुक्त हो जाता है। उसका ब्रह्मचर्य स्थिर हो जाता है। उसका वीर्य दृढ़ और अमोघ हो जाता है। जठराग्नि प्रदीप्त हो जाती है। उसका ब्रह्मचर्य इतना पूर्ण हो जाता है कि यदि अप्सरा भी उसे आलिङ्गन करे तो भी वह अपने ब्रह्मचर्य से नहीं डिगता। भूख तेज़ हो जाती है। नाड़ियाँ शुद्ध हो जाती हैं। विक्षेप हट जाते हैं और मन एकाग्र हो जाता है। रजो और तमोगुण का नाश हो जाता है। मन धारणा और ध्यान के अभ्यास के लिए तैयार हो जाता है। मल त्याग कम होता है। दृढ़ अभ्यास द्वारा दिव्य ज्योति जगती है, और मन को शान्ति तथा आनन्द प्राप्त होता है। अब अभ्यासकर्त्ता उर्ध्वरेता योगी हो जाता है। उपरोक्त वर्णित सिद्धियाँ ऊँचे अभ्यास वाले योगी हो को प्राप्त होती हैं।

अभ्यास द्वारा मन साधारण अनुभवों की अपेक्षा उच्चतर अवस्था में पहुँच कर उच्चतम ज्ञान तथा ध्यान की अवस्था में पहुँच जाता है, जहाँ मामूली ध्यान करने वाले की पहुँच नहीं।

साधारण चेतना जिसका अनुभव नहीं कर सकती ऐसी बातों का प्रत्यक्ष अनुभव उन्नत अभ्यासकर्त्ता को होने लगता है। उपयुक्त शिक्षा और सूक्ष्म शरीर की शक्तियों का कौशलपूर्वक प्रयोग करने से मन को ऊपर उठने में सहायता मिलती है, जिससे ऊपर के लोकों का और उन्नत अवस्थाओं का अनुभव उसे मिलता है। जब मन असाधारण रूप से चैतन्य प्राप्त कर लेता है तब वहाँ से और आगे के अनुभव और ज्ञान उसे प्राप्त होते हैं। यही योगाभ्यास का लक्ष्य भी है जो नियमपूर्वक प्राणायाम के अभ्यास से प्राप्त हो सकता है। तात्पर्य प्राण पर अधिकार प्राप्त कर लेने से उन्नतम अध्यात्म ज्ञान प्राप्त होता है जिससे आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है।

विशेष ध्यान देने वाली बातें

(१) बहुत सवेरे उठकर शौचादि से निवृत्त होकर अभ्यास करने बैठ जाओ। प्राणायाम का अभ्यास सूखे और खुले कमरे में करना चाहिए। प्राणायाम में एकाग्रता और गहरे ध्यान की आवश्यकता पड़ती है। प्राणायाम का अभ्यास सदा किसी स्थिर आसन विशेष को लगा कर करना चाहिए। अभ्यास करने के समय बिल्कुल एकान्त होनी चाहिए। शोर गुल में ध्यान ठीक नहीं लगता।

(२) प्राणायाम का अभ्यास करने के पहले नाक अच्छी तरह साफ कर लेनी चाहिए। अभ्यास करने के पहले किसी फल का रस, एक प्याला दूध या काफी ले सकते हो। प्राणायाम समाप्त करने के दस मिनिट बाद एक प्याला दूध या हलका कलेवा करना चाहिए।

(३) गर्मियों में सवेरे एक बार ही अभ्यास करना चाहिए। यदि सिर में गर्मी मालूम हो तो सिर में आँवले का तेल या मक्खन लगाने के बाद नहाओ। नहाकर मिश्री का शर्बत लेना चाहिए। इससे सारे शरीर में ठंडक आ जायगी। शीतली प्राणायाम का अभ्यास करो। इससे गर्मी नुकसान नहीं पहुँचायेगी।

(४) वार्तालाप, भोजन, सोना, मित्रों से बहुत सम्पर्क रखना तथा परिश्रम आदि में अति न करना चाहिए। गीता अध्याय ६ श्लोक १६ में कहा गया है कि जो बहुत खाता है, या जो बहुत परहेज करता है और जो बहुत जागता है, योगाभ्यास का अधिकारी नहीं। अत उपरोक्त बातों में अति करना अच्छा नहीं। भोजन के समय भात में थोडा सा घी डाल कर खाना चाहिए। इससे आँतों में चिकनाहट पहुँचती है और अपान वायु विधिवत् निकल जाता है।

(५) मिताहार विना यस्तु योगारम्भतु कारयेन।
नानारोगो भवेत्तस्य किञ्चित् योगो न सिध्यति॥
(घेरंड संहिता अध्याय ५ श्लोक १६)

मिताहार का नियम पालन किये बिना जो योगाभ्यास करता है, उसे कोई सिद्धि तो मिलती नहीं, बल्कि उल्टे वह नाना रोगों का शिकार हो जाता है।

(६) ६ महीने या पूरे साल भर तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने से योगाभ्यास और आध्यात्मिक मार्ग में शीघ्रता से उन्नति होगी। योगाभ्यास काल में स्त्रियों से बातचीत तक न करना चाहिए, उनके साथ हँसना या मजाक करना तो दूर की बात है। उनका सहवास बिल्कुल त्याग देना चाहिए। ब्रह्मचर्य और मिताहार के नियमों का पालन किये बिना योगाभ्यास करने से बहुत थोडी आध्यात्मिक उन्नति होगी। किन्तु केवल

साधारण स्वास्थ्य रक्षार्थ हठयोग के सरल अभ्यास किये जा सकते हैं।

(७) अभ्यास नियमपूर्वक और विधिपूर्वक करने चाहिए। एक दिन का भी नागा मत करो। जब कभी बहुत बीमार हो जाओ तब भले ही योगाभ्यास को कुछ दिनों के लिए स्थगित कर दो। कुछ लोग कुम्भक करने के समय चेहरे की मास पेशियाँ बहुत सिकोड लेते हैं। ऐसा नहीं करना चाहिए। ऐसा करना यह प्रगट करता है कि अभ्यासकर्ता अपनी शक्ति के बाहर जा रहा है। ऐसा कभी न करना चाहिए। ऐसे लोग नियन्त्रित रेचक और पूरक कभी नहीं कर सकते।

(८) योग के विघ्न हैं "दिन में सोना, रात में देर तक जागना, मल मूत्र अधिक परिमाण में होना, अरुचिकर भोजन के अवगुण, और थका देने वाला प्राण का मानसिक परिश्रम"। जब किसी को कोई रोग होता है, तब वह कहता है कि, इसका कारण योगाभ्यास है। ऐसा कहना बडी गलती है।

(९) प्रात काल ४ बजे उठ बैठो। आधे घंटे तक अपने इष्टदेव का ध्यान और जप करो। इसके बाद आसन और मुद्रा का अभ्यास करो। १५ मिनिट तक आराम करो। इसके उपरान्त प्राणायाम का अभ्यास करो। जो लोग अन्य प्रकार के व्यायाम करते हैं वे उन्हे आसनो के साथ कर सकते हैं। यदि अभ्यासकर्त्ता के पास फालतू समय हो तो वह अन्य व्यायामो

को योगाभ्यास और ध्यान के उपरान्त कर सकता है। सोकर उठते ही ध्यान और जप के पहले भी प्राणायाम का अभ्यास किया जा सकता है। ऐसा करने से शरीर भी हल्का हो जायगा और ध्यान का भी आनन्द आवेगा। अपनी सुविधा के अनुसार अभ्यासकर्ता को कार्यक्रम बना लेना चाहिए।

(१०) आसन और प्राणायाम के साथ साथ जप करने से अत्यधिक लाभ होता है।

(११) ४ बजे सवेरे उठते ही ध्यान और जप करना बहुत अच्छा होता है। इस समय मन शान्त और ताजा रहता है। इस समय मन एकाग्र भी खूब होता है।

(१२) बहुत से आदमी प्रातःकाल का अमूल्य समय शौचादि में बिता देते हैं। आधा घंटा टट्टी और आधा ही घंटा उन्हें दातोन करने में लगता है। ऐसा करना उचित नहीं। योगाभ्यासी को शौच में ५ मिनिट और मुखशुद्धि में भी इससे अधिक समय नहीं देना चाहिए। यदि बद्धकोष्ठ अर्थात् कब्ज रहता हो तो सोकर उठते ही तेजी से शलभ, भुजङ्ग और धनुरासनों का ५ मिनिट तक अभ्यास करना चाहिए। यदि शौच देर में होता हो तो योगाभ्यास के उपरान्त ही शौच जाना चाहिये।

(१३) जप और ध्यान पहले कर लो। इसके बाद आसन और प्राणायाम का अभ्यास करो। इसके उपरान्त ध्यान का अभ्यास करो।

(१४) सो कर उठने के बाद थोड़ी बहुत खुमारी रहती ही है। इसलिये उठते ही ५ मिनिट थोड़ा सा आसन और प्राणायाम कर लेना चाहिए। ऐसा करने से सुस्ती और खुमारी दूर हो जायेगी और ध्यान के लिए तुम तैयार हो जाओगे। प्राणायाम के अभ्यास के उपरान्त मन एकाग्र हो जाता है। यद्यपि प्राणायाम का सम्बन्ध श्वास से ही है, तो भी प्राणायाम करने में सारे शरीर और शरीर के भीतर के बहुत से अङ्गों का व्यायाम हो जाता है।

(१५) योग की क्रियाओं के करने का क्रम इस प्रकार है—पहले सब आसन कर डालो, तब मुद्रा, फिर प्राणायाम और तब ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। प्रातःकाल का समय ध्यान के लिए अधिक उपयुक्त है। अतः निम्नलिखित क्रम पहले की अपेक्षा और भी अच्छा है। आरम्भ में जप, फिर ध्यान, फिर आसन, फिर मुद्रा और अन्त में प्राणायाम। जो कार्यक्रम तुम्हारी प्रकृति के अनुकूल हो उसीके अनुसार अभ्यास करो। आसनों के अभ्यास के बाद ५ मिनिट आराम करने के बाद ही प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

(१६) हठयोग की कुछ पुस्तकों में प्रातःकाल ठंडे पानी से नहाने की मनाई की गयी है। इसका कारण शायद यह हो कि काश्मीर, मसूरी दार्जिलिङ्ग आदि सी ठंडी जगहों में सवेरे ४ बजे ठंडे जल से नहाने में सर्दी जुकाम हो जाने से फेफड़ों में

कोई बीमारी उठ खड़ी होने की सम्भावना हो। गरम जगहों मे यह नियम लागू नहीं है। मेरी राय मे तो सवेरे नहा धोकर स्वच्छ और चैतन्य हो जाने के बाद ही योगाभ्यास करना उचित है। ऐसा करने से खुमारी और सुस्ती का शरीर मे नाम नही रहता। सवेरे नहाने से रक्त का सचार ठीक रहता है। स्वस्थ तथा शुद्ध रक्त मस्तिष्कगामी रहता है।

(१८) आसन और प्राणायाम के अभ्यास से सब प्रकार के रोग अच्छे हो जाते हैं, स्वास्थ्य मे उन्नति होती है सुषुम्ना नाड़ी सीधी हो कर चलती है। रजोगुण और तमोगुण का ह्रास होता है और कुण्डलिनी जागृत होती है। आसन और प्राणायाम के अभ्यास से शरीर और मन दोनो स्वस्थ और दृढ़ होते हैं। बिना स्वस्थ शरीर और दृढ़ मन के कोई भी साधन सफलतापूर्वक नही हो सकता। अत: ध्यानयोगियों, कर्मयोगियों भक्तो और वेदान्तियो के लिए हठयोग समान रूप से उपयोगी है।

(१८) बिना आसन या अन्य शारीरिक व्यायाम के शरीर का स्वास्थ्य ठीक नहीं रह सकता। कट्टर वेदान्ती भी अज्ञातभाव से हठयोगी ही होता है। वह किसी न किसी प्रकार के आसन का नित्य अभ्यास करता है। वह अज्ञातभाव से प्राणायाम का भी अभ्यास करता है क्योंकि ध्यान करते समय प्राणायाम स्वत. ही हो जाता है।

(१९) जब कभी तुम्हे किसी तरह की घबड़ाहट, या

उदासी या मन गिरा हुआ सा लगे उसी समय प्राणायाम का अभ्यास करो। उसी समय तुम्हारे शरीर में, नवीन स्फूर्ति, उत्साह और शक्ति आ जावेगी। और नवीनता, उन्नति के साथ साथ तुममें आनन्द भी बढ़ेगा। इसको एक बार करके देखो, निबंध लेख या थीसिस के लिखने के पूर्व प्राणायाम कर लो। तुम्हारे लेख नवीन विचारोत्पादक, शक्तिशाली और मौलिक होंगे।

(२०) अभ्यास नियमपूर्वक करो। आसन और प्राणायाम का पूर्ण फल प्राप्त करने की आकांक्षा रखने वाले को अभ्यास नित्य नियमपूर्वक अवश्य करना चाहिये। नियमपूर्वक न करने से योगाभ्यास का कोई फल नहीं। साधारणतया आरम्भ में दो महीने तो लोग बड़े उत्साह से योगाभ्यास करते हैं, किन्तु फिर न मालूम क्यों उनका उत्साह ठंडा हो जाता है और वे अभ्यास छोड़ बैठते हैं। यह खेदपूर्ण भूल है। ऐसे लोग सदा एक योग निर्देशकर्ता को अपने पास रखना चाहते हैं। उनकी मानसिक प्रवृत्ति बड़ी जनानी हो जाती है। वे बड़े सुस्त, अकर्मण्य और एहदी होते हैं।

(२१) मनुष्य निरस्वार्थ सेवा तथा योग क्रियाओं के विक्षेप द्वारा मल हटाना नहीं चाहते। वे तो एक साथ ही कुण्डलिनी को जागृत कर के ब्रह्माकार वृत्ति को ऊपर उठा देना चाहते हैं। ऐसा करने से उनकी टाँगें टूट जावेंगी। जो लोग आसन और प्राणायाम के अभ्यास द्वारा कुण्डलिनी जागृत करना चाहते हैं, उनको

अपने कर्म, विचार और शब्द में शुद्धता लानी चाहिए। उन्हें मन और शरीर दोनों से ब्रह्मचर्य का अभ्यास करना चाहिए। ऐसा करने से ही जागृत कुण्डलिनी के फल का उपभोग किया जा सकता है।

(२२) बाल्यावस्था में ही अध्यात्म विषयक प्रेम का बीज बो देना चाहिये। वीर्य नष्ट मत करो। मन और इन्द्रियों का निग्रह करो। साधना करो। बुढापे में कठिन साधना नहीं हो सकती। इसलिए युवावस्था से ही साधना का आरम्भ कर दो। थोड़े दिनों में ही भिन्न भिन्न साधनाओं का फल तुम्हें मिलने लगेगा।

(२०) जैसे जैसे योग के आध्यात्मिक मार्ग में उन्नति करते जाओ वैसे ही वैसे कभी कभी पूरे २४ घंटे के पूर्ण मौनव्रत का अभ्यास करो। इस तरह का अभ्यास बराबर कुछ महीनों तक चलना चाहिए। अपनी प्रकृति के अनुकूल अभ्यासकर्ता को आसन और प्राणायाम के विशेष अभ्यास चुन कर करने चाहिए।

(२४) बहुत तरह के प्रलोभनों का सामना करते हुए भी ब्रह्मचर्य का पालन करना सम्भव है। नियमित दिनचर्या, स्वाध्याय, सत्सङ्ग, जप, ध्यान, प्राणायाम, सात्विक मिताहार, सदाचार, नित्य अपने नैतिक जीवन का विवेचन, यम, नियम, वा अभ्यास, कायिक वाचिक तप आदि का अभ्यास करने से अभ्यासकर्ता शीघ्र अपने लक्ष्य पर पहुँच जाता है। जो लोग अनियमित,

पापपूर्ण, असयत तथा अधार्मिक जीवन व्यतीत करते हैं कभी भी जीवन मे सुख और शान्ति नहीं प्राप्त कर सकते। जैसे हाथी अपनी सूड से अपने सिर पर धूल फेंकता है वैसे ही वे भी अपने ही दुष्कर्मों से कठिनाइयाँ और दु ख पैदा करते हैं।

(२५) शरीर को अनावश्यक मत हिलाओ। बहुधा शरीर के हिलाने से मन अस्थिर होता है। कभी शरीर को मत खरोंचो। प्राणायाम, जप और ध्यान के समय आसन अचल होना चाहिए।

(२६) तुम स्वय इसका पता लगाओ कि तुम्हारे स्वास्थ्य और शरीर के अनुकूल किस तरह का भोजन और किस विशेष प्रकार का प्राणायाम ठीक होगा। तभी तुम्हारी साधना निर्विघ्न चल सकती है। पहले इस पुस्तक मे दिये गये सब अभ्यासों के नियम आरम्भ से अन्त तक ध्यान से पढ लो। अभ्यास के नियम अच्छी तरह समझ लो। किसी तरह का कहीं सन्देह हो तो उस विशेष विषय या अभ्यास को, किसी अनुभवी योग के जानकार से पूछ लो। यही सब से सुरक्षित मार्ग है। कोई भी कहीं से एक अभ्यास को लेकर बिना समझे बूझे न करना चाहिए।

(२७) मैंने सब व्यायामों मे प्रणव की संख्या समय के नाप के लिए रखी है। अपनी प्रवृत्ति तथा रुचि के अनुसार अभ्यास-कर्ता अपनी गुरुमन्त्र, राम, शिव, गायत्री आदि मन्त्रों की

सख्या से समय निश्चित कर काम चला सकता है। प्राणायाम के लिए सर्वोत्तम मन्त्र प्रणव और गायत्री है। आरम्भ में पूरक रेचक और कुम्भक के करने मे नियमित जप सख्या काम मे लानी चाहिए। अभ्यास बढने पर पूरक, कुम्भक और रेचक सख्या और समय के अनुसार अपने आप होने लगते हैं। अभ्यास बढ जाने पर समय और सख्या का ध्यान रखने की आवश्यकता नही रहती। अभ्यास करते करते प्राणायाम के समय और सख्या की आदत अपने आप पड जाती है।

(२८) आरम्भ के थोडे दिनों तक उन्नति के विचार से समय और सख्या पर ध्यान रखना आवश्यक है। उन्नत अवस्था में पहुँच कर समय और सख्या मे मन को फँसाने की आवश्यकता नही रहती। समय और सख्या पूरी होने की सूचना फेफडे स्वय देने लगते हैं।

(२९) इतना प्राणायाम कभी मत करो, जिससे थक जाओ। अभ्यास करते समय और कर चुकने पर, चित्त प्रसन्न रहना चाहिए और उत्साह पूर्ण रहना चाहिये। प्राणायाम के अभ्यास के अन्त मे शरीर मे ताजापन और फुर्ती रहनी चाहिए। बहुत से नियमो के बन्धन में भी रहना ठीक नही।

(३०) प्राणायाम समाप्त करने के बाद ही नहाना ठीक नही। आध घटा आराम कर लो। प्राणायाम के अभ्यास मे यदि पसीना आ जाय तो उसे तौलिये से मत पोंछो। अपने हाथों से उसे

पोंछना चाहिए। पसीना आने के समय वद जगह मे रहो उस समय खुली ठंडी हवा लगने से शरीर को हानि पहुँचने की आशङ्का रहती है।

(३१) साँस हमेशा बहुत धीरे लेनी और छोडनी चाहिए। साँस लेने या छोडने में शब्द बिल्कुल नहीं होना चाहिए। भस्त्रिका, कपालभाती, शीतली और शीतकरी प्राणायाम के अभ्यास मे बहुत हल्का शब्द होना चाहिए।

(३२) दो एक दिन में दो या तीन मिनट के अभ्यास से फल की आशा नहीं रखनी चाहिए। कुछ दिनों तक १५ मिनिट नित्य नियमपूर्वक प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। नित्य नवीन २ अभ्यासों के करने से कोई लाभ नहीं। नित्य के अभ्यास के लिये कोई एक व्यायाम चुन लो और उसीका नित्य नियमपूर्वक अभ्यास कर के उसमें सफलता प्राप्त करो। इस नित्य के अभ्यास वाले व्यायाम के साथ कभी कभी एक या दो अन्य व्यायाम भी रुचि के अनुसार किये जा सकते हैं। भस्त्रिका, कपालभाती तथा सुखपूर्ण प्राणायाम का नित्य अभ्यास करते हुए शीतली और शीतकरी प्राणायामों का अभ्यास कभी कभी करना चाहिए।

(३३) पूरक और रेचक क्रम से निश्वास और उच्छ्वास के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। केवल कुम्भक में मानसिक क्रिया को श्वास नियम का सम्यक प्रकार कहते हैं। दृढ तथा नियमपूर्वक

सख्या से समय निश्चित कर काम चला सकता है। प्राणायाम के लिए सर्वोत्तम मन्त्र प्रणव और गायत्री है। आरम्भ मे पूरक रेचक और कुम्भक के करने में नियमित जप सख्या काम मे लानी चाहिए। अभ्यास बढ़ने पर पूरक, कुम्भक और रेचक सख्या और समय के अनुसार अपने आप होने लगते हैं। अभ्यास बढ जाने पर समय और सख्या का ध्यान रखने की आवश्यकता नही रहती। अभ्यास करते करते प्राणायाम के समय और सख्या की आदत अपने आप पड़ जाती है।

(२८) आरम्भ के थोडे दिनो तक उन्नति के विचार से समय और सख्या पर ध्यान रखना आवश्यक है। उन्नत अवस्था में पहुँच कर समय और सख्या मे मन को फँसाने की आवश्यकता नही रहती। समय और सख्या पूरी होने की सूचना फेफडे स्वय देने लगते हैं।

(२९) इतना प्राणायाम कभी मत करो, जिससे थक जाओ। अभ्यास करते समय और कर चुकने पर, चित्त प्रसन्न रहना चाहिए और उत्साह पूर्ण रहना चाहिये। प्राणायाम के अभ्यास के अन्त मे शरीर में ताजापन और फुर्ती रहनी चाहिए। बहुत से नियमो के बन्धन मे भी रहना ठीक नही।

(३०) प्राणायाम समाप्त करने के बाद ही नहाना ठीक नहीं। आध घटा आराम कर लो। प्राणायाम के अभ्यास में यदि पसीना आ जाय तो उसे तौलिये से मत पोंछो। अपने हाथों से उसे

(३७) व्याघ्रचर्म, मृगचर्म या चौपर्त किया हुआ कम्बल बिछा लो। इस पर एक साफ़ सफ़ेद कपड़ा बिछाओ। उत्तर की तरफ़ मुख करके प्राणायाम करने बैठ जाओ।

(३८) कुछ लोग पहले रेचक करके फिर पूरक और कुम्भक करते हैं और कुछ पूरक करके कुम्भक और रेचक करते हैं। पिछली प्रणाली ही अधिक प्रचलित है। याज्ञवल्क्य जी के अनुसार पहले पूरक करके फिर कुम्भक और रेचक करना चाहिए। किन्तु नारदजी के कथनानुसार रेचक करके पूरक और कुम्भक करना चाहिए। इन दोनों में जो जिसकी प्रकृति के अनुकूल पड़े उसी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए।

(३९) योगी को भय, क्रोध और आलस्य से दूर रहना चाहिए। अधिक सोना, अधिक चलना, अधिक भोजन अथवा अधिक उपवास भी योगी को न करना चाहिए। यदि उपरोक्त नियमों का पालन नित्य प्रति कठोरता से किया जाय, तो निस्सन्देह तीन महीनों में आत्मज्ञान का उदय स्वतः ही हो जायगा। चार महीने के अभ्यास में देवदर्शन, पाँच महीने में ब्रह्मनिष्ठ और छः महीने के अभ्यास से स्वेच्छानुसार कैवल्य प्राप्त हो जायगा। इसमें सन्देह नहीं।

(४०) नये अभ्यासकर्ता को आरम्भ में थोड़े दिनों तक केवल पूरक और रेचक का ही अभ्यास करना चाहिये। रेचक करने में अधिक से अधिक समय लगाओ। पूरक और रेचक में

अभ्यास द्वारा कुम्भक को बढाना अभ्यासयोग कहलाता है। वायु पी कर उसी पर रहने का नाम वायु भक्षण है।

(३४) शिवयोग दीपिका के लेखक तीन प्रकार के प्राणायामों का जिक्र करते हैं, यथा प्रकृति, वैकृत और केवल कुम्भक। स्वाभाविक सास लेने और छोडने को प्राकृत प्राणायाम कहते हैं। शिवयोग दीपिका के मतानुसार पूरक कुम्भक और रेचक करके श्वास लेने को वैकृत अर्थात् अस्वाभाविक कहते हैं। किन्तु उपरोक्त दोनो प्राकृत और वैकृत प्राणायामों के परे उन्नत अभ्यासी सहसा श्वास क्रिया को रोक कर केवल कुम्भक करते हैं। प्राकृत प्राणायाम मन्त्र योग की चीज है और वैकृत लययोग की।

(३५) "कुम्भक वह अवस्था है जिसमें श्वास और प्रश्वास दोनो क्रियाएँ बन्द रहती हैं और शरीर निश्चल भाव मे रहता है। उस अवस्था मे वह प्रज्ञाचक्षु से देखता है, बहिरा की तरह सुनता और शरीर को लकडी की तरह देखता है। कुम्भक की पूर्णता का यही लक्षण है।

(३६) पातञ्जलि ने भिन्न भिन्न प्राणायामों के करने पर अधिक जोर नहीं दिया है। वे कहते हैं कि 'धीरे धीरे साँस छोडो और फिर साँस ले कर रोको। ऐसा करने से तुम्हारा मन स्थिर और शान्त हो जायगा।" हठयोगियों ने ही भिन्न भिन्न प्रकृति के मनुष्यों की प्रकृति के अनुसार भिन्न भिन्न प्राणायामों का वैज्ञानिक रूप से सृष्टि की है।

(३७) बाघम्बर, मृगचर्म या चौपर्त किया हुआ कंबल बिछा लो। इस पर एक साफ सफेद कपडा बिछाओ। उत्तर की तरफ मुख करके प्राणायाम करने बैठ जाओ।

(३८) कुछ लोग पहले रेचक करके फिर पूरक और कुम्भक करते हैं और कुछ पूरक करके कुम्भक और रेचक करते हैं। पिछली प्रणाली ही अधिक प्रचलित है। याज्ञवल्क्य जी के अनुसार पहले पूरक करके फिर कुम्भक और रेचक करना चाहिए। किन्तु नारदजी के कथनानुसार रेचक करके पूरक और कुम्भक करना चाहिए। इन दोनों में जो जिसकी प्रकृति के अनुकूल पड़े उसी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए।

(३९) योगी को भय, क्रोध और आलस्य से दूर रहना चाहिए। अधिक सोना, अधिक चलना, अधिक भोजन अथवा अधिक उपवास भी योगी को न करना चाहिए। यदि उपरोक्त नियमों का पालन नित्य प्रति कठोरता से किया जाय, तो निस्सन्देह तीन महीनों में आत्मज्ञान का उदय स्वत ही हो जायगा। चार महीने के अभ्यास से देवदर्शन, पाँच महीने मे ब्रह्मनिष्ठ और छः महीने के अभ्यास से स्वेच्छानुसार कैवल्य प्राप्त हो जायगा। इसमें सन्देह नहीं।

(४०) नये अभ्यासकर्ता को आरम्भ में थोड़े दिनों तक केवल पूरक और रेचक का ही अभ्यास करना चाहिये। रेचक करने में अधिक से अधिक समय लगाओ। पूरक और रेचक मे

एक और दो मात्राओं का हिसाब रहता है। पूरक १ मिनिट करे तो रेचक २ मिनिट तक करना चाहिए।

(४१) आरम्भावस्था में हर कोई प्राणायाम का अभ्यास चलते फिरते या बैठे हुए किसी भी मुद्रा मे कर सकता है। ऐसा करते हुए भी प्राणायाम अवश्य लाभदायक होगा। किन्तु जो लोग प्राणायाम को शास्त्रीय विधि के अनुसार करते हैं उनको प्राणायाम का फल बहुत शीघ्र मिलता है।

(४२) कुम्भक का समय धीरे धीरे बढाओ। प्रथम सप्ताह मे केवल ४ सेकंड साँस रोकने का अभ्यास करो। दूसरे मे ८ तीसरे में १२। इस तरह बढाते बढाते अपनी पूरी शक्ति भर आराम से रोकने का अभ्यास करना चाहिए।

(४३) अपने अभ्यास मे सदा युक्ति से काम लो। यदि कोई विशेष अभ्यास तुम्हारी प्रकृति के अनुकूल नहीं पडता, तो उस पर विचार करके या अपने गुरु की सम्मति लेकर उसमे परिवर्तन कर दो। इसीको युक्ति कहते हैं। जहाँ युक्ति है वहाँ सिद्धि, भुक्ति और मुक्ति है।

(४४) पूरक, कुम्भक और रेचक का अभ्यास इस खूबी के साथ करना चाहिए कि अभ्यास की किसी भी अवस्था मे साँस घुटने का सा अनुभव या किसी भी तरह का कष्ट न प्रतीत हो। इतनी तेजी से प्राणायाम कभी मत करो कि जिससे किन्हीं दो प्राणायाम की आवृत्तियों में दम लेने की आवश्यकता पड जाय।

पूरक, कुम्भक और रेचक का समय निर्धारण युक्तिपूर्वक करना चाहिए। इस काम में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है। सावधान रहने से अभ्यास में सरलतापूर्वक सफलता मिल जायगी।

(४५) रेचक को आवश्यकता से अधिक धीरे धीरे भी न करना चाहिए। यदि रेचक में अत्यधिक समय लगा दोगे तो पूरक और कुम्भक बहुत शीघ्र हो जावेंगे जिससे प्राणायाम का ताल टूट जायगा। पूरक, कुम्भक और रेचक तीनों इस युक्ति से करना चाहिए कि जिससे नित्य के प्राणायाम की निर्धारित संख्या का अभ्यास आराम से बिना थकावट हो जाय। यह बात महत्वपूर्ण होने से मैंने कई बार कही है। अनुभव और अभ्यास से सब ठीक हो जायगा। अपना सङ्कल्प दृढ़ रखो। अपने फेफड़ों पर तुम्हारा पूरा अधिकार होना चाहिए जिससे प्राणायाम की निर्धारित संख्या के अन्तिम प्राणायाम का रेचक नियमानुसार ही धीरे धीरे हो और पूरक के जोड़ का ही दूना हो। ऐसा न हो कि अन्त में तार टूट जाय और साँस जल्दी निकल जाय।

(४६) सूर्यभेद और उज्जायी से शरीर में गर्मी पैदा होती है। शीतकरी और शीतली ठंडक पैदा करते हैं। भस्त्रिका से शरीर का तापमान स्थिर रहता है। सूर्यभेद से वायु का आधिक्य नष्ट होता है, उज्जायी से कफ और श्लेष्मा, शीतली और शीतकरी से पित्त और भस्त्रिका से वात पित्त कफ तीनों के विकार शान्त होते हैं।

(४७) सूर्यभेद और उज्जायी का अभ्यास जाडो मे करना चाहिए। शीतली और शीतकरी का अभ्यास गर्मी में करना चाहिए। भस्त्रिका का अभ्यास साल भर लगातार किया जा सकता है। जिन लोगों का शरीर जाडे मे भी गरम रहे वे जाडो मे भी शीतली या शीतकरी का अभ्यास कर सकते है।

(४८) जीवन का लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार करना है। निरालम्ब उप मे लिखा है कि आत्मसाक्षात्कार करने के लिए 'शरीर और इन्द्रियों का दमन करना चाहिए, सद्गुरु की सेवा, वेदान्त के सिद्धान्तो का श्रवण और निरन्तर ध्यान करते रहने से आत्मसाक्षात्कार हो जाता है।" यदि सफलता प्राप्त करने की तुम्हारी लगन सच्ची है और यदि अपने मार्ग मे शीघ्र सिद्धि चाहते हो तो आसन, प्राणायाम, जप, ध्यान और स्वाध्याय का एक नियमित कार्यक्रम बना लो और उसीके अनुसार नियमपूर्वक काम करो। ब्रह्मचर्य पालन मे सदा दत्तचित्त रहो। मुक्तिकोपनिषद के अनुसार आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति, सत्सग, वासनाओं का पूर्ण त्याग और प्राण पर नियन्त्रण द्वारा ही मन पर अधिकार प्राप्त होता है।"

(४९) एक बार फिर मैं कहता हूँ कि आध्यात्मिक सफलता आसन, प्राणायाम, जप, ध्यान, ब्रह्मविचार, सत्सङ्ग, एकान्तवास, मौन और निष्काम कर्म द्वारा ही प्राप्त हो सकती है। हठ योग का अभ्यास किये बिना राजयोग कठिनता से सफल होता

है। कुम्भक के अन्त में मन को सब पदार्थों से हटा लेना चाहिए। इसी तरह अभ्यास करते करते तुम्हारा प्रवेश राजयोग में हो जायगा।

(५०) वेदान्त का अध्ययन करने वाले कुछ विद्यार्थी अपने को ज्ञानी समझ कर आसन और प्राणायाम पर अधिक ध्यान नहीं देते। उन वेदान्त के विद्यार्थियों को तब तक आसन और प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए जब तक कि वे साधन चतुष्टय अर्थात शम दमादि की षट सम्पत्ति में निष्णात न हो जावें, क्योंकि ज्ञान योग का आरम्भ ही उपरोक्त साधन चतुष्टय से आरम्भ होता है।

(५१) सङ्कोच कभी मत करो। ऐसे गुरु के पाने की प्रतीक्षा कभी मत करो जो घटों तुम्हारी बगल में बैठा हुआ तुम्हें अपने सामने अभ्यास कराएगा। यदि तुम्हारी लगन सच्ची है, यदि तुम्हारा अभ्यास विधि और नियम पूर्वक है और यदि तुम इस पुस्तक में दिये नियमों और शिक्षाओं के अनुसार सावधानी से अभ्यास करते हो, तो तुम्हें किसी तरह का कष्ट न होगा। तुम्हें सफलता अवश्य मिलेगी। आरम्भ में थोडी बहुत कठिनाइयाँ आ ही जाती हैं। इनकी पर्वाह मत करो। इन विघ्नों के आने पर अनावश्यक रूप से मत घबडा उठो। घबडा कर अभ्यास मत छोड बैठो। ऐसे मौकों पर सावधानी से काम करने पर तुम कठिनाई के पार हो जाओगे। उस समय युक्ति, लगन प्रवृत्ति

और अन्तरात्मा के शब्द तुमको रास्ते पर ले आवेंगे। अन्त में विघ्न बाधाओं को पार कर फिर तुम ठीक रास्ते पर आ जाओगे। इसी समय से सच्ची लगन के साथ अभ्यास का आरम्भ कर दो तो तुम पूरे योगी हो जाओगे।

ॐ—शान्ति ! शान्ति ! ! शान्ति ! ! !

उपसंहार

सूर्यचक्र पर ध्यान लगाना

सूर्यचक्र (solar plexus) अथवा उदर मस्तिष्क कहलाता है। यह एक महत्वपूर्ण स्नायु केन्द्र है, जिसका सम्बन्ध सहानुभूति-स्नायु मण्डल (Sympathetic nervous system) से है। जठर प्रदेश में इसका स्थान है जो पेट की तली के पास मेरुदण्ड के दोनों तरफ स्थित है। मनुष्य के मुख्य मुख्य अभ्यन्तरिक अङ्ग यहीं से परिचालित होते हैं। आदमी की समझ से अधिक काम सूर्यचक्र करता है। हमारे भावों को व्यक्त करने तथा अन्य अनेक अङ्गों के परिचालन में यह काम देता है। जिस श्वेत और भूरे पदार्थ का मस्तिष्क बना होता है यह भी उसीका बना होता है। शरीर के मुख्य मर्म अङ्गों में से यह एक है। मुक्केबाज अच्छी तरह जानते हैं कि सूर्यचक्र पर मारी हुई चोट से प्रतिद्वन्द्वी बेहोश होकर बेकाम हो जाता है। यहीं प्राण का खजाना रहता है। शरीर का यह पावर-हाउस है। शरीर के सोलह आधारों में सब से अधिक महत्वपूर्ण आधार है। यह एक जानी हुई बात है कि सूर्यचक्र पर पूरी चोट पड़ने से आदमी मर जाता है। सच बात तो यों है कि, सूर्यचक्र सारे स्नायुमण्डल का सूर्य है। जब तक कि यह सूर्य ठीक ठीक चमकता रहता है तब तक सारा शरीर अपना काम ठीक ठीक करता

है। शरीर के सब अङ्गों को बल और स्फूर्ति यहीं से मिलती है। विचार और प्राण जब प्राणायाम द्वारा इस चक्र पर चालित किये जाते हैं, तब सूर्यचक्र का गुप्त प्रकाश प्रस्फुटित होता है।

पद्मासन या सिद्धासन लगा कर सीधे बैठ जाओ। आँखें बन्द कर लो। जब तक आराम से ले सको वामनासा रन्ध्र से साँस खींचो। साँस खींचते समय दक्षिण नासा रन्ध्र दहिने अँगूठे से बन्द रखो। प्राणायाम करते समय बराबर प्रणव का जप करते रहो। पूरक करने के बाद कुम्भक करो। कुम्भक करने के समय अपना ध्यान सूर्यचक्र पर रखो। मन को उस समय वहीं एकाग्र रहना चाहिए। ध्यान लगाने का मतलब मन पर बहुत जोर लगाना नहीं है। कुम्भक द्वारा प्राण का संचार सूर्यचक्र में करो। उस समय ऐसा विचारो कि "मैं साँस के साथ प्राण, आनन्द, सुख, बल स्फूर्ति और प्रेम प्राप्त कर रहा हूँ। कुम्भक के उपरान्त दक्षिण नासारन्ध्र से धीरे धीरे साँस निकाल दो। इसके उपरान्त दक्षिण नासारन्ध्र में साँस लो, पहले की तरह ध्यानपूर्वक रोक कर वाम नासारन्ध्र से साँस निकाल दो। इस तरह बारह प्राणायाम सबेरे करो। भय, उदासी कमजोरी और अनावश्यक भावनाएँ जो आध्यात्मिक उन्नति में बाधक रूप से खड़ी रहती हैं, सब नष्ट हो जावेंगी। इस तरह नियमपूर्वक अभ्यास करते रहने से विश्वास की दृढ़ता होगी और आत्मसाक्षात्कार रूपी सफलता शीघ्र प्राप्त हो जावेगी।

पंच धारणाएँ

पृथ्वी-धारणा

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश नामक पाँच तत्व हैं। इन पाँचों तत्वों के अनुरूप ही पंच धारणाएँ भी हैं। पैरों से घुटनों तक पृथ्वी प्रदेश माना जाता है। उसकी आकृति चौकोर है, रंग पीत है, संस्कृत "ल" इसका वर्ण है। इसी का ध्यान करते हुए अभ्यासकर्ता को नित्य दो घंटे धारणा का अभ्यास करना चाहिए। ऐसा करने से पृथ्वी (तत्व) के ऊपर उसका अधिकार हो जाता है। पृथ्वीतत्व के ऊपर अधिकार प्राप्त करने से मृत्यु उसका कुछ नहीं कर सकता।

आम्वासी (जल) धारणा

जल तत्व का स्थान घुटनों से गुह्य देश तक कहा गया है। आपस (जल) का आकार अर्धचन्द्र के समान है और रङ्ग श्वेत है। जल तत्व का बीज मन्त्र 'व' है। जल के चेत्र का ध्यान करते समय व का जप करते हुए पूरक करे। उस समय चतुर्भुजी, पीताम्बर धारी अव्यय भगवान नारायण के स्वरूप का ध्यान करना चाहिए। दो घंटे इस तरह रोज़ धारणा करने से मनुष्य पाप रहित हो जाता है। फिर उस मनुष्य को जल से कोई भय नहीं रहता।

आग्नेयी धारणा

गुदा से हृदय तक अग्नि का प्रदेश माना गया है। इस की आकृति त्रिकोणाकार है इसका रंग लाल और इसका बीजाक्षर "र" है। पूरक करते समय अग्नि प्रदेश में त्रिलोचन रुद्र का जो सब कामनाओं को पूर्ण करते हैं और जिनका रंग … के सूर्य का सा है, ध्यान "र" का जप करते हुए करना चाहिए॥ जो पुरुष नित्य दो घंटे इस आग्नेयी-धारणा का अभ्यास करता है वह जलती भट्टी में गिर कर भी नहीं जल सकता।

वायु-धारणा

हृदय से लेकर भ्रूमध्य तक का स्थान वायु प्रदेश कहा गया है। इसका रंग काला है और "य" बीजाक्षर से चमकता रहता है। वायु-प्रदेश में प्राण ले जाते समय सर्वज्ञ ईश्वर का … करना चाहिए। ऐसा करने से वायु से किसी तरह की … अभ्यासकर्ता को नहीं पहुँचती।

आकाशी धारणा

भ्रूमध्य से लेकर सिर की चोटी तक आकाश का स्थान … यह गोलाकार है, इसका रंग धुमैला है और "ह" अक्षर चमकता है। आकाश स्थान में पूरक करते समय सदाशिव … ध्यान करना चाहिए। इस धारणा का अभ्यास करने से … पन (लघिमा) शरीर में आता है और योगी को सब … प्राप्त होती हैं।

योगी भुशुंड की कथा

योगी भुशुंड चिरजीवी कहे जाते हैं। प्राणायाम विज्ञान के वे गुरु कहे जाते हैं। कहा जाता है कि, महामेरु की उत्तरी चोटी पर स्थित कल्पवृक्ष की दक्षिणी शाखा पर, पर्वताकार घोंसला उन्होंने बनाया है। इसी घोंसले में काकभुशुंड जी रहते हैं। ये काकभुशुंड ही सब से अधिक जीने वाले योगी कहे जाते हैं। वे त्रिकालज्ञ हैं। वे स्वेच्छानुसार अधिक से अधिक समय तक समाधि लगा कर बैठे रह सकते हैं। उन्हें कोई वासना नहीं। उन्हें सर्वोच्च ज्ञान और शान्ति प्राप्त है। आत्मानन्द का सुख लेते हुए ये चिरजीवी काकभुशुंड अब भी वहीं रहते हैं। उन्होंने "अलुम्बुष" नामक ब्रह्मशक्ति की बहुत दिनों तक उपासना की है। उपरोक्त कल्पवृक्ष पर युगों की कौन कहे कल्पों से काकभुशुंड जी रह रहे हैं। प्रलय के समय वे अपने घोंसले से निकलते हैं। उन्हींको पाँचों धारणाओं का पूर्ण ज्ञान है। पंच धारणाओं का अभ्यास करते करते वे पाँचों तत्वों के आघातों के लिए कवच रूप हो गये हैं। कहा जाता है कि, जब बारहों आदित्य अपनी तीव्र किरणों से संसार को तपाते हैं, तब वे जल धारणा द्वारा आकाश में पहुँच जावेंगे। जब ऊँची ऊँची लहरों की टक्करों से बड़े बड़े पहाड़ चूर होने लगेंगे, तब अग्नि धारणा द्वारा वे आकाश में पहुँच जावेंगे। जब महामेरु के साथ सारी पृथ्वी जलमग्न हो जावेगी, तब वायु-धारणा द्वारा वे जल

पर तैरते रहेंगे। और जब महाप्रलय मे सब कुछ नष्ट हो जाता है तब नवीन सृष्टि होने तक वे सुषुप्ति अवस्था मे ब्रह्माधीन रहते हैं। सृष्टि फिर से होते ही, वे फिर अपनी पुरानी जगह पर पहुँच जाते हैं। उनके सङ्कल्प से प्रत्येक नवीन कल्प के आरम्भ मे महामेरु पर फिर कल्पवृक्ष उत्पन्न होता है।

शारीरिक कारखाना

हम लोग जो भोजन करते हैं, वह अधिकतर नाइट्रोजिनस तत्वो, प्रोटीड्स, चर्बीली चीजें या हाइड्रोकार्बन्स जैसे घी आदि अथवा कार्बो हाइड्रेट्स वस्तुए जैसे चावल चीनी आदि का होता है। प्रोटीड्स युक्त पदार्थों से शरीर के रग रेशे और मांसपेशियाँ बनती हैं। कार्बो हाइड्रेट्स पदार्थो स शरीर मे स्फूर्ति उत्पन्न होती है। इनके अलावा हमारे भोजन में अनेक प्रकार के क्षार भी होते हैं। अनेक प्रकार के पाचक रस जैसे मुँह की लार या सलिवा, पेट का जठर या गास्ट्रिक रस, पित्त, पैंक्रियाटिक रस और आँतो मे उत्पन्न होने वाले रस मुँह से गुदा तक पहुँचने वाले मार्ग मे भोज्य पदार्थो के पचाने मे बड़ा काम करते हैं। माड (starch) युक्त पदार्थों को लार या सलीवा पचाता है। माड पच कर चीनी का रूप धारण करता है और आगे बढने पर आँतो मे पेनक्रियाटिक और आँतरस अपना अपना काम करते हैं। इन सब रसो के सम्मिश्रण से पेट मे पहुँचा हुआ सारा भोजन दूध की तरह सफेद और पतली सूरत में बदल

जाता है जिसे चाइल (chyle) कहते हैं। इस चाइल को अन्नरसवाही नाडियाँ पचाती हैं। फिर यही रस रक्त बन जाता है। हृदय के दक्षिणी भाग में अशुद्ध रक्त जमा होता है। वह अशुद्ध रक्त शुद्ध होने के लिए फेफडों में जाता है। शुद्ध हो कर यह रक्त हृदय के वाम भाग में आता है और वहाँ से पम्प होकर विशाल आओर्टा नामक धमनी मे जाता है। यहाँ से वह रक्त सारे शरीर में फैल जाता है। बाल की तरह सूक्ष्म नाडियों में पहुँच कर रक्त वर्णहीन रस की तरह पसीजा करता है और शरीर के रग रेशों और कोषाणुओं को सिंचन और पुष्ट करता है। सारे शरीर में घूम कर अशुद्ध हुआ रक्त स्नायुओं द्वारा फिर हृदय के दक्षिण भाग मे आ कर जमा होता है।

पचने से बचा हुआ भोज्य पदार्थ, जिसे हम भोजन का फोक कह सकते हैं, अन्त में छः फीट लम्बी बडी आँत में मल के रूप में जमा होता है। जब बडी आँत मल से भर जाती है तब टट्टी लगने की भावना मेरुदण्ड से गुदा को पहुँचती है, तब पाखाना लगने पर आदमी दिसा फिरता है, जिसमे गुदा द्वारा अन्तरस्थित मल बाहर निकल जाता है।

गुर्दे जो कमर में दोनो तरफ बने हैं, रक्त मे से पेशाब बराबर खींचा करते हैं और ureters यूरेटर्स नामक दो मूत्रवाहिनी नाड़ियों द्वारा मूत्र को मूत्राशय मे पहुँचाते हैं। फिर यह मूत्र शिश्न द्वारा पेशाब लगने पर, बाहर निकल जाता है।

स्नायु मण्डल अग्र मस्तिष्क जिसे cereberum कहते हैं, cerebellum या लघुमस्तिष्क, मेरुदण्ड स्थित स्नायु और सहानुभूत-स्नायु समूह का बना है। मस्तिष्क में देखने, सुनने, स्वाद लेने, सूघने और बोलने की क्रिया आदि के अनेक केन्द्र हैं। जब बिच्छू हाथ की उँगली में काटता है तब काटे जाने की भावना सेंसरी स्नायुओं द्वारा मेरुदण्ड स्थित विशाल स्नायु को पहुँचती है और वहाँ से उसकी खबर मस्तिष्क को मिलती है। मन जो मस्तिष्क में रहता है, इस समाचार को पाते ही काम करता है। मन उस काटने के दर्द को ज्ञात करता है। अब मन की आज्ञा मेरुदण्ड वाली स्नायु से होती हुई मोटर स्नायु को मिलती है और वहाँ से हाथों को आज्ञा मिलती है। आज्ञा पाते ही हाथ एकदम बिच्छू से अलग हो जाते हैं। ये सब काम एक निमेष में हो जाते हैं। इस पीड़ा का समाचार और प्रभाव सहानुभूत स्नायु समूह द्वारा सारे शरीर के आन्तरिक अङ्गों, उदर, प्लीहा, हृदय और तिल्ली आदि में पहुँच जाता है।

अब मैं महाशक्तिशाली वीर्य की उत्पत्ति सुनाता हूँ। अण्डकोषों में जो दो गोलियाँ होती हैं उन्हें अंग्रेजी में secretary glands या चरण ग्रन्थियाँ कहते हैं। जैसे शहद की मक्खियाँ बूँद बूँद शहद इकट्ठा करती हैं वैसे ही अण्डकोष के कोषाणु रक्त से बूँद बूँद वीर्य एकत्रित किया करते हैं। अब यह वीर्य दो नाड़ियों द्वारा खींच लिया जाता है और वीर्याशय को

दो थैलियों में जमा होता है। कामोत्तेजना के समय यही वीर्य वीर्याशय में से छोटी छोटी नाड़ियों द्वारा मूत्र नलिका में आ जाता है और prostrate gland प्रोस्ट्रेट ग्रन्थि के रस से मिल कर बाहर निकल आता है। इन आन्तरिक अङ्गों का वास्तविक परिचालक कौन है? इस सूक्ष्म महत्वपूर्ण आन्तरिक यन्त्रों का बनाने वाला कौन है? हृदय, फेफड़े, मस्तिष्क आदिकों की आश्चर्यपूर्ण बनावट को देख कर जिसमें उस विश्वनिर्माता की अद्भुत कारीगरी का प्रदर्शन है क्या तुम आश्चर्य में आ कर अवाक नहीं हो जाते? शरीर के सारे अङ्ग किस तरह एक तार में काम करते हैं? भोज्य पदार्थों को कौन रक्त में परिवर्तित करता है? रक्त को कौन धमनियों में पहुँचाता है? यह उसी ईश्वर का काम है उसी का अस्तित्व शरीर में तथा ब्रह्माण्ड में अनुभव करो। उसी सर्वव्यापक ईश्वर का चुपचाप गुणगान करो। अपनी प्रतिमूर्ति रूप इस आश्चर्यपूर्ण शरीर के निर्माता को धन्य है। यह नवद्वारपुरी रूपी शरीर उसी सृष्टिकर्ता का मन्दिर है।

योगी का आहार

वह भोजन जो योगाभ्यास का सहायक और लाभकारी हो और जिससे आध्यात्मिक उन्नति हो, योगी का उपयुक्त भोजन कहा जा सकता है। भोजन का सम्बन्ध मन से बहुत कुछ है। भोजन के सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणुओं से मन बनता है। महर्षि उद्-

लक ने अपने पुत्र श्वेतकेतु से कहा है "पचने के बाद भोजन के तीन रूप हो जाते हैं। मोटा भाग मल का रूप हो जाता है, मध्यम भाग मास और सूक्ष्म भाग से मन बनता है।" आगे इसी सम्बन्ध में छान्दोग्योपनिषत् में लिखा है "अन्न की शुद्धि से प्रकृति (स्वभाव) शुद्ध होती है, प्रकृति (स्वभाव) शुद्ध होने से आत्मा का ज्ञान होता है, आत्मज्ञान होने से मोह और माया बन्धन टूट जाता है।"

सात्विक, राजसिक और तामसिक नाम से भोजन के तीन भेद होते हैं। दूध, फल, अन्न, मक्खन, पनीर, टमाटर, spinach सात्विक भोज्य पदार्थ हैं। इनके खाने से मन शुद्ध होता है। मछली अण्डे मांस आदि राजसिक भोजन हैं। इनके खाने से मनुष्य की कामोत्तेजना बढ़ती है। गोमांस, प्याज, लहसुन आदि तामसिक भोजन हैं। इनके खाने से मन में क्रोध और सुस्ती आती है। भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है "मनुष्यों को जो भोजन प्रिय है वह तीन तरह का है। सुनो, मैं उनका भेद बतलाता हूँ। वे भोज्य पदार्थ जिनसे जीवनशक्ति, स्फूर्ति, बल, स्वास्थ्य और सुख बढ़े या उत्पन्न हो और जो, स्वादिष्ट नरम, रुचिकर और लाभदायक हो, सात्विक पुरुषों का भोजन है। राजसिक मनुष्यों को वे भोजन पसन्द हैं जो कड़ुए, खट्टे, सलौने, गरमा गरम, चटपटे, सूखे और जलन पैदा करने वाले होते हैं और जिनके खाने से पीड़ा दुःख और तरह तरह के रोग उत्पन्न होते हैं।

चासा, बेस्वाद, सड़ा गला और अशुद्ध भोजन तामसिक लोगों को प्रिय होता है।"

(गीता अध्याय १७—श्लोक ८—१०)

भोजन और भी चार प्रकार का है। पेय जो पीया जाय, ठोस भोजन जो दाँतों से चबा कर खाया जाय, कुछ ऐसे पदार्थ जो सिर्फ चाट कर खाये जावें, नरम भोजन जो बिना चबाए ही खा लिये जावें। भोजन के सब पदार्थों को खूब चबा चबा कर खाना चाहिए। ऐसा करने से ही वे जल्दी से पच कर देह में लगते हैं।

हमारा भोजन ऐसा होना चाहिए जिससे हमारा स्वास्थ्य ठीक रहे और शरीर अच्छी तरह काम करे। मनुष्य का कल्याण अन्य बातों की अपेक्षा उसके पुष्टिकर पालन पर, अधिक निर्भर है। अनेक प्रकार के आँतों के रोग, छूत के रोगों का सरलता से शिकार बन जाना, शक्तिहीनता के कारण प्रतिरोधी शक्ति की कमी, रिकेट अर्थात् हड्डी की कमज़ोरी, स्कर्वी अर्थात् ताज़े भोजन न खाने से उत्पन्न होने वाला रोग, रुधिर की कमी, नरोनेरी आदि अनेक रोग शरीर को उपयुक्त पुष्टि न प्राप्त होने से पैदा होते हैं। यह हमेशा समझ लेना चाहिए कि जलवायु की अपेक्षा अच्छा भोजन मनुष्य को स्वस्थ और बलवान बनाता है और बुरा भोजन मनुष्य को निर्बल और रोगी बनाता है। जो अपना स्वास्थ्य अच्छा रखना चाहते हैं, उनको भोजन विज्ञान अवश्य जानना चाहिए। ऐसा करने से शक्ति और पुष्टिदायक

भोजन का नियम जानने से वह उचित भोजन ही खावेगा। ऐसा पुष्ट भोजन करने से उसके कुटुम्ब के लोग स्वस्थ और सुखी रहेंगे। आवश्यकता है सतोगुणी भोजन की न कि बहुत खर्चीले भोजन की। बहुत खर्चीला या मसालेदार भोजन प्लीहा, गुर्दे और उदरस्थ रोग उत्पन्न करने वाला होता है। समताशील भोजन करने से मनुष्य बढता है और उसमें अधिक काम करने की शक्ति भी आती है, शरीर का वजन बढने के साथ साथ शरीर में स्फूर्ति और शक्ति भी खूब रहती है। आदमी जैसा खाता है वैसा ही होता है। यह बडा पक्का सिद्धान्त है।

भोजन दो कार्यों के लिए किया जाता है। (१) शरीर का तापमान ठीक रखने के लिए और (२) शरीर में निरन्तर होती रहने वाली कमियों को पूरा करने के लिए और नये रग रेशे बनाने के लिए। भोज्य पदार्थों में अन्नसार श्वेत-सारमय भोजन कार्बन का मिश्रण दाहक क्षार क्षार, अनेक प्रकार की भस्म जल और पौष्टिक पदार्थ होते हैं। दाल और दूध में ये पदार्थ प्रचुर परिमाण में होते हैं। ये पदार्थ नये रग रेशे बनाने में बडी सहायता देते हैं। प्रोटीन्स अर्थात अन्नसार वस्तुएं पेचीली शारीरिक सम्मिश्रण वस्तुएं होती हैं। इनमें कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सिजन और नाइट्राजन तथा कभी कभी गन्धक, दाहक पदार्थ और लोहा भी होता है। माडयुक्त पदार्थ कार्बोहाइड्रेट्स होते हैं। चावल में यह पदार्थ प्रचुर परि-

माण में होना है। कार्बोहाइड्रेट पदार्थ शक्तिवर्धक तथा अग्नि वर्धक होते हैं। कार्बो हाइड्रेट्स माड, चीनी और गोंद का होता है जिनमें कार्बन हाइड्रोजन और आक्सिजन होते हैं। हाइड्रो कार्बन या चर्बीला तत्व घी और वनस्पतिक तैलों में रहता हैं। ग्लिसरीन के साथ चिकने तेजाबों के सम्मिश्रण होने स ही, चर्बी युक्त पदार्थ बनता है। शरीर यन्त्र में तेल देकर चिकना रखना जरूरी होता है। मक्खन, मलाई, पनीर, मूंगफली का तेल, सरसो का तेल, जैतून का तेल शरीर में चिकनाहट पहुँचाने के अच्छे साधन हैं।

पूर्ण भोजन वही है, जिसमें भोजन विज्ञान के अनुसार पुष्टिकारक पदार्थ उचित तथा सम मात्रा मे हो, जिसके खाने से शरीर और मन स्वस्थ रहे। दूध पूर्ण भोज्य पदार्थ है क्योंकि इसमें सब आवश्यक पुष्टिकर पदार्थ पर्याप्त मात्रा में रहते हैं। अन्नसार, चिकनाहट और कार्बोहाइड्रेट्स उचित मात्रा में होना चाहिये। जिस भोजन में उपरोक्त आवश्यक पदार्थ कमज्यादा रहते हैं, अर्थात् किसी पदार्थ की मात्रा अत्यधिक हो या किसी की अति अल्प तो वह विषम भोजन हो जाता है। विषम भोजन करने स शरीर पुष्ट न होगा, शरीर की बाढ दोष-पूर्ण होगी और शरीर में अनेक तरह की कमियाँ दृष्टिगोचर होंगी। अपुष्टिकर भोजन करने स तरह तरह की बीमारियाँ उठ खड़ी होती हैं। स्वादिष्ट, पुष्टिकारक तथा सम गुण वाला भोजन करने से शरीर बलवान, टिकाऊ और काम का बनेगा।

शरीर पुष्ट होने से काम भी ठीक होता है। बहुत से आदमी दूध को माँसाहार और बहुत से अंडे को फलाहार समझते हैं। ऐसा समझने वाले भ्रम में हैं। दूध फलाहार है और अंडे मांसाहार। यह सिद्धान्त विद्वान ऋषियों ने माना है। योगाभ्यासियों को अंडा छोड़ देना चाहिए। दूध, मक्खन, पनीर, फल, बादाम, टमाटर, गाजर और शलजम में सर्व प्रकार के पुष्टिकारक पदार्थ होते हैं।

महत्वपूर्ण पाचक रस है सलीवा यानी लार। मुँह में, जठर रस, उदर में, पेनक्रियाटिक रस, पित्त और आन्त्र रस छोटी आँतों में। लार का सज्जीखार alkaline होता है, लार सलीवरी ग्रन्थियों से निकला करती है। माड़युक्त पदार्थों को यह पचाती है, गास्ट्रिक रस का प्रतिफल reaction तेजाबी होता है। इसमें हाईड्रोक्लोरिक एसिड रहता है। यह भी गास्ट्रिक ग्रन्थियों से रिसा करता है। अन्नसार युक्त वस्तुएँ इससे पचती हैं। माड युक्त पदार्थ, अन्नसार तथा चिकनी चीजें पेनक्रियाटिक रस पचाती है। इस रस में तीन तरह के पाचक गुण होते हैं। पेनक्रियाम में यह रस बना करता है। पित्त प्लीहा में बनता है। पित्त चिकनी चीजें पचाता है। इन पाचक रसों के मिलने से भोजन किया हुआ अन्न दूध की तरह पतला chyle हो जाता है जो छोटी आँतों की दुग्धरसवाहक नलिकाओं से सोख लिया जाता है।

भोजन भट्ट या भोगी विलासी लोगों के लिए योगाभ्यास में

सफलता पाना स्वप्नवत् है। जो मामूली भोजन करता है और जो भोजन में समता का सिद्धान्त पालन करता है, वही योगी हो सकता है। इसलिये भगवान कृष्ण ने गीता में अर्जुन से कहा है—"हे अर्जुन, जो बहुत खाते हैं, या जो हद दर्जे का परहेज करते हैं, या जो बहुत सोते हैं या जो बहुत जागते हैं, ऐसे हर बात में अति करने वाले योग के अधिकारी नहीं हैं। जो आहार विहार में, कर्म करने में, सोने जगने में संयम से काम लेता है, योगाभ्यास उस मनुष्यों के सब कष्ट हर लेता है।" (गीता अध्याय ६—श्लोक १६—१७)। मधुर स्वादिष्ट तथा सुखदायक भोजन आधा पेट खाओ, चौथाई पेट शुद्ध जल से भरो और शेष चौथाई स्थान वायु के लिए छोड़ दो। यही सम भोजन है।

दुर्गन्धिपूर्ण, सड़े, बासे, जिनमें खमीर उठ रहा हो, गंदे, दो बार पकाये हुए, रात भर रखे हुए भोजन कभी न खाने चाहिए। भोजन सादा, हलका, नरम, स्वादिष्ट और सरलता से पचने वाला और पुष्टिकारक होना चाहिए। भोजन करने के लिए जो जीते हैं वे पापी हैं, जो जीने के लिए भोजन करते हैं संत हैं। पिछले सिद्धान्त पर चलने वाले ही चन्दनीय हैं। भूख होने पर किया हुआ भोजन अच्छी तरह पच जाता है। यदि भूख न हो तो कभी मत खाओ और पेट को आराम करने दो।

अधिक भोजन करने से पेट पर काम अधिक पड़ जाता है, झूठी भूख लगने लगती है और जबान बड़ी असन्तुष्ट रहा

करती है। ज़बान को सहसा कोई चीज अच्छी नहीं लगती। यही कारण है कि मनुष्य को अनेक प्रकार के भोजन बनाने पड़ते हैं जो जीभ को अच्छे लगें जिससे मनुष्य का जीवन बड़ा पेचीला और दुःखपूर्ण हो जाता है। आश्चर्य की बात यह है कि जब इन्द्रियाँ उसे नाच नचा रही हैं और जब वह वास्तव में अज्ञान है तब भी वह अपने को सभ्य और गुणी कहता है। जब किसी नया जगह में उसे अपनी रुचि के अनुसार भोजन की तरकारियाँ नहीं मिलतीं तब वह घबरा उठता है। क्या यही सच्चा बल है? ऐसा मनुष्य तो नितान्त जिह्वा का दास होता है। यह अच्छी बात नहीं है। भोजन सादा और यथाशक्ति प्राकृतिक करना चाहिए। जीवित रहने के लिए खाओ, खाने के लिए मत जीओ। ऐसा करने से ही तुम्हें सच्चा सुख मिलेगा और योगाभ्यास में यथेष्ट समय दे सकोगे।

जो योगाभ्यासी ध्यान करने में अधिक समय देते हैं, उन्हें बहुत कम भोजनों की आवश्यकता पड़ती है। उनका काम सेर भर या डेढ़ सेर दूध और फलों से ही चल जाता है। किन्तु वही आदमी जब शारीरिक कार्यक्षेत्र में उतरता है, तब उसे बहुत से पुष्टिकारक भोजन की आवश्यकता पड़ती है। अत्यधिक शारीरिक श्रम करने वाले को उसके अनुरूप भोजन की आवश्यकता पड़ती है।

स्वास्थ्यरक्षा के लिए गोश्त खाने की आवश्यकता बिल्कुल नहीं है। मांसाहार स्वास्थ्यरक्षा के लिए बड़ा हानिकारक है।

मासाहार करने स शरीर मे नहरुआ, वीर्यस्राव, प्रमेह आदि गुर्दे के अनेक भयङ्कर रोग उत्पन्न हो जाते हैं। भोजन के लिए पशु-हत्या करना बड़ा पाप है। ममता और अहङ्कार का जगह अज्ञानी लोग देवी पर बल चढाने के बहाने किन्तु अपनी जीभ के स्वाद के लिए निरपराध पशुओं की हत्या करते है। यह बडी भयङ्कर तथा मानवता के विरुद्ध प्रथा है। अहिंसा परमोधर्म। अध्यात्म मार्ग का अवलम्बन करने वाले के लिए अहिंसा व्रत-पालन सर्व प्रधान और प्रथम कर्तव्य है। जीव मात्र के लिए हमार हृदय में आदर और दया होना चाहिए। महात्मा ईसा ने कहा है "दयालु जन धन्य हैं, क्योंकि उन्हे दया मिलेगी" ईसा मसीह और महावीर स्वामी चिल्ला चिल्ला कर कह गये हैं, "सब जीवो मे अपना ही आत्मा देखो इसलिए किसी को कष्ट मत पहुँचाओ।" कर्म की गति अमिट है, अवश्यम्भावी और निश्चय है। जो कष्ट तुम दूसरे को पहुँचाते हो, वह तुमको समय पाने पर अवश्य मिलेगा और जो सुख तुम दूसरे को पहुँचाते हो, वह भी दूना हो कर तुम्हे प्राप्त होगा।

लेडी मार्गरेट अस्पताल के बडे चिकित्सक डा० जे० ओल्डफील्ट लिखते हैं, "आज एक महत्वपूर्ण रासायनिक ज्ञान सब लोगों को विदित है, जिसके प्रमाण अकाट्य हैं, कि वनस्पति जगत में मनुष्य को पुष्ट करने वाले पदार्थों की कमी नहीं है। मास अस्वाभाविक भोजन है और इसलिए मासाहार करने मे बहुत से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। आजकल के सभ्य ससार में

मांसाहार के प्रचार होने से सभ्य समाज में कैंसर, क्षय, ज्वर, आँतों के कीड़े आदि भयङ्कर उड़कर लगने वाली बीमारियों की भरमार है। आश्चर्य करने का कोई कारण नहीं है कि, मांसाहार ही ऐसी भयङ्कर बीमारियों के उत्पन्न होने का कारण है, जिससे सौ में निन्नानवे नवजात शिशुओं की मृत्यु होती है।"

मांसाहार और मदिरापान का दामन-चोली का साथ है। मांसाहार छोड़ते ही मदिरापान स्वयमेव छूट जाता है। जो लोग मांसाहारी हैं, उनके लिये सम्भोग-निग्रह का प्रश्न बड़ा कठिन है। उनके लिए मन को वश में करना नितान्त असम्भव है। देखो, मांसाहारी व्याघ्र कितना खूंखार होता है और वनस्पति का आहार करने वाली गौ और हाथी कितने सौम्य होते हैं। मांसाहार करने से मस्तिष्क-कोष पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है। इसीलिए अध्यात्म मार्ग का प्रथम सोपान मांसाहार का त्याग है। मांसाहार से पूरित उदर वाले के हृदय में दैवी ज्योति का आविर्भाव कभी न होगा। अधिक मांसाहारी लोगों के देशों में कैंसर से मरने वालों की संख्या अत्यधिक है। शाकाहारी लोगों का स्वास्थ्य बहुत वृद्धावस्था में भी अच्छा रहता है। पश्चिमी देशों में भी अस्पतालों में रोगियों को वहाँ के डाक्टर शाकाहार पर ही रखते हैं। शाकाहार पर रहने से उन देशों में रोगी जल्द चंगे हो जाते हैं।

यूनान देश के प्रसिद्ध महात्मा पीथागोरस ने मांसाहार की बड़ी निन्दा की है और उसे पापाहार बतलाया है। जरा सुनिये

वे इस सम्बन्ध में क्या कहते हैं—'हे मरणशील प्राणियो ! अपने शरीर को पापपूर्ण भोजन से भर कर, अशुद्ध मत करो। तरह तरह के अन्न, फल जिनके बोझ से पेड़ों की डालें झुकी जाती हैं और स्वादिष्ट अंगूरों की कमी नहीं है। उन मधुर शाकों और कन्द मूलों की कमी नहीं, है जो आग में पकाने से नर्म और स्वादिष्ट हो जाते हैं। दूध की कमी नहीं हैं और न सुगन्धित थीमा (पुष्प विशेष) पुष्प की कमी है। इस हरी भरी पृथ्वी पर भोजन की जब अनन्त सामग्रियाँ मिल सकती हैं, तब रक्तपात की आवश्यकता क्या है।' *

यदि तुम सचमुच माँस और मछली का खाना छोड़ना चाहते हो तो जिस समय भेड़ मारी जाती है, उस समय की उसकी प्राणरक्षार्थ चिल्लाने और हाथ पैर पटकने की दशा अपनी आँखों से देखो। उस दृश्य को देखते ही दया और सहानुभूति स्वयमेव तुम्हारे हृदय में उत्पन्न होंगे, तभी तुम माँसाहार त्यागने का दृढ़ सङ्कल्प कर लोगे। इस प्रयत्न में यदि असफल हो तो अपना वातावरण बदल दो और किसी अच्छे शाकाहारी भोजनालय में जाकर रहो जहाँ के समाज में माँस मछली देखने को भी नहीं मिल सकती। सदा माँसाहार के दोषों

---

* स्वच्छन्द वनजातेन शाकेनाऽपि प्रपूर्यते।
अस्य दग्धोदरस्यार्थे कः कुर्यात् पातकं नरः॥
स्वमांसं परमांसेन यो वर्द्धयितुमिच्छति।
नास्ति क्षुद्रतरस्तस्मात् स नृशंसतरो नरः॥

और शाकाहार के लाभ पर विचार किया करो। इस पर भी माँस पर जी चले तो कसाईखाने में जाकर कटे हुए माँस के लोथड़ों, अंतड़ियों और गुर्दों को देखो जिनमें से बराबर बदबू निकला करती है। उस दृश्य को देखते ही माँसाहार से स्वयं विरक्ति उत्पन्न हो जायगी। अमूल्य दूध और मक्खन देने वाली गौ या बकरी की हत्या करना केवल जघन्य ही नहीं बल्कि एक बड़ा अत्याचारपूर्ण अपराध है। अपने को धोखा देने वाले अज्ञानी तथा निष्ठुर मनुष्यो! इन निरपराध प्राणियों को मत मारो। निरपराध जीवों की हत्या के फल रूप भयङ्कर यन्त्रणाएँ कयामत के दिन तुम्हें भोगनी पड़ेगी। अपने सब कर्मों का उत्तरदायित्व तुम्हारे ऊपर ही है। कर्म का फल मिलना अनिवार्य है। गौहत्या का पाप माता की हत्या के बराबर है। जिन जीवों के दूध से तुम्हारे शरीर पुष्ट होते हैं, उन निरपराध जीवों के प्राण लेने का तुम्हें क्या अधिकार है। यह काम बड़ा ही निर्दय, अमानुषिक और दिल को दहला देने वाला है। गाय, बकरी जैसे निरपराध और किसी को हानि न पहुँचाने वाले पशुओं की हत्या कानून से रोकी जानी चाहिए। हत्या होने के समय डर और क्रोध के मारे उन पशुओं के रक्त में बहुत तरह का जहर भर जाता है।

शाकाहार शरीर की भोजन सम्बन्धी सब आवश्यकताएँ पूरी कर सकता है। इसलिए माँसाहार-जनित निष्ठुरताएँ अनावश्यक हैं।

अब मैं कुछ विटामिन [खाद्य पदार्थों का पुष्टिकारक अंश विशेष] के सम्बन्ध में बतलाऊँगा। भोजन में विटामिन की आवश्यकता पड़ती है। ये शरीर को बनाते हैं। यदि हमारे भोजन में विटामिन न हो या कम हो, तो शरीर बढ नहीं सकता और फलतः विटामिन की कमी से उत्पन्न होने वाली रिकेट और स्कर्वी नामक बीमारियां उठ खड़ी होती हैं। विटामिन बहुत कम मात्राओं मे हमारे भोजन में रहते है। ये आग की चिनगारी की तरह होते है, जिनके सम्पर्क में पुष्टिकारक अग्नि जल उठती है। ए० बी० सी० और डी० नाम से विटामिन के चार भेद होते है। विटामिन ए० दूध में होता है। विटामिन बी० टमाटर के रस और हाथ से कूटे जाने वाले चावल में होता है। विटामिन बी० की कमी से बेरीबेरी रोग उत्पन्न होता है। जो लोग मिल का साफ और पालिश किया हुआ चावल खाते है, उनको यह रोग हो जाता है। विटामिन सी० तरकारियों, फलों और हरी पत्तियों में होता है। पकाने से या डिब्बो में हरी चीजों को बंद रखने से यह विटामिन नष्ट हो जाता है। अक्सर करके जहाजी मल्लाहों को जब लंबी समुद्री यात्राओं में ताजे फल और साग सब्जी नहीं मिलती, तब स्कर्वी रोग हो जाता है। इसलिए बहुधा वे लोग अपने पास नीबू का रस रखते हैं। नीबू का रस पीने से स्कर्वी नहीं होती। विटामिन डी० दूध, मक्खन, अंडे, काड लिवरआइल आदि में रहता है। विटामिन डी० की कमी से

लहर शरीर के सब रगरशों में भर जाती है। इस तरह शरीर के सब अणु परमाणु और कोष नवजीवन प्राप्त कर फिर ताजे हो जाते हैं।

निर्बलता उत्पन्न करने के कारण उपवासों का योगाभ्यासियों के लिए निषेध है। कभी कभी हल्का उपवास करने से बड़ा लाभ होता है। इससे शरीर एक बार आवरहाल अर्थात फिर से ठीक हो जाता है। उपवास से उदर और आँतों को आराम मिलता है और यूरिक एसिड निकल जाता है। योगाभ्यासियों को दिन के ११ बजे भर पेट खाना चाहिए, सवेरे एक प्याला दूध और रात में आधा सेर दूध दो केले, दो संतर या दो सेब खाने चाहिए। रात का भोजन हल्का होना चाहिए। पेट भारी रहने से नींद अच्छी न आवेगी। योगाभ्यासियों के लिए दूध और फल सब से अच्छा भोजन है।

सादा, स्वाभाविक, अनुत्तेजक, रगरशे बनाने वाला, स्फूर्ति और शक्तिदायक, जो नशीला न हो, ऐसा भोजन और पेय हो मन को शुद्ध और शान्त रखता है, जिससे योगाभ्यास में जीवन के लक्ष्य तक पहुँचने में सहायता मिलती है।

लड़कों को रिकेटस रोग जिसमें हड्डियाँ कमजोर होती है हो जाता है।

हमारा भोजन एक तरह का स्फूर्ति भडार है। भोजन द्वारा शरीर और मन में स्फूर्ति और शक्ति पहुँचती है। यदि इसी स्फूर्ति और शक्ति को तुम इच्छा शक्ति अथवा योगिक कौशल द्वारा प्राण के भडार हिरण्यगर्भ से प्राण ले कर, पूरा कर लो तो भोजन बिना भी तुम रह सकते हो। योगी लोग इसी तरह कायासिद्धि करते हैं।

यदि भोजन बिल्कुल पच जाय तो बद्धकोष्ठ हो जायगा। भोजन में न पचने वाले छिलके या फोक या रेशेदार चीजों का रहना आवश्यक है जिससे मल बने। जब पेट में पाचन कार्य हो रहा हो तब पानी नही पीना चाहिए। ऐसा करने से उदरस्थ पाचन रस घुल कर पतले हो जायँगे और पाचन कमजोर हो जायगा। भोजन कर चुकने बाद एक गिलास पानी पी सकते हो।

किन्तु नित्य भिक्षा पर रहने वाले सन्यासियों को उपरोक्त समगुणी भोजन कहाँ मिले। उन्हे किसी दिन कटु भोजन मिलता है, तो किसी दिन केवल मिष्टान्न ही पर गुजर करनी पड़ती है, और किसी दिन उनके पल्ले सिर्फ खट्टी चीजें ही आती हैं। किन्तु ध्यान द्वारा वे आवश्यक स्फूर्ति प्राप्त करते हैं। यह निराला योगिक कौशल चिकित्सकों और वैज्ञानिकों को अज्ञात है। जब कभी मन एकाग्र होता है तब दैवी स्फूर्ति की

लहर शरीर के सब रगरेशों में भर जाती हैं। इस तरह शरीर के सब अणु परमाणु और कोष नवजीवन प्राप्त कर फिर ताजे हो जाते हैं।

निर्बलता उत्पन्न करने के कारण उपवासों का योगाभ्यासियों के लिए निषेध है। कभी कभी हल्का उपवास करने से बड़ा लाभ होता है। इससे शरीर एक बार आवरहाल अर्थात् फिर से ठीक हो जाता है। उपवास से उदर और आँतों को आराम मिलता है और यूरिक एसिड निकल जाता है। योगाभ्यासियों को दिन के ११ बजे भर पेट खाना चाहिए, सबेरे एक प्याला दूध और रात में आधा सेर दूध दो केले, दो सन्तरे या दो सेब खाने चाहिए। रात का भोजन हल्का होना चाहिए। पेट भारी रहने से नींद अच्छी न आवेगी। योगाभ्यासियों के लिए दूध और फल सब से अच्छा भोजन है।

सादा, स्वाभाविक, अनुत्तेजक, रगरसे बनाने वाला, स्फूर्ति और शक्तिदायक, जो नशीला न हो, ऐसा भोजन और पेय ही मन को शुद्ध और शान्त रखता है, जिससे योगाभ्यास में जीवन के लक्ष्य तक पहुँचने में सहायता मिलती है।

॥ इति ॥

दिनचर्या

कामकाजी लोगों के लिए प्रारम्भिक कार्यक्रम

कोर्स ए

शीर्षासन	५ मिनिट	सवेरे
सर्वाङ्गासन	५ ,,	सवेरे ४ बजे से ४-२५ तक
मत्स्यासन	३ ,,	
पश्चिमोत्तानासन	५ ,,	
अन्य आसन	५ ,,	
शवासन	२ ,,	
आराम	५ ,,	४—२५ से ४—३० तक
भस्त्रिका	५ ,,	४—३० से ४—४० तक
अन्य प्राणायाम	५ ,,	
जप और ध्यान	५० ,,	४—४० से ५—३० तक
स्वाध्याय	३० ,,	५—३० से ६ तक
व्यायाम या घूमना	१ घटा	६ से ७ तक
आसन प्राणायाम, जप और ध्यान	१½ घटा	शाम को ६½ से ७¾ तक
भजन कीर्तन	आधा घटा	पौने ८ से सवा ८ तक

ब्यालू और आराम	१५ मिनिट	सवा ८ से साढ़े ८ तक
निद्रा	६ घंटे	९—३० से ३—३० तक

केर्स वी कामकाजी उन्नत अभ्यासियों के लिये

		प्रात काल
ध्यान	१ घंटा	३—३० से ४—३० तक
शीर्षासन	३० मिनिट	४—३० से ५ तक
सर्वाङ्गासन, पश्चिमोत्तासन मयूरासन तथा अन्य आसन	२० मिनिट	५ से ५—३० तक
भस्त्रिका या अन्य प्राणायाम	३० ,,	५—३० से ६ तक
जप	३० ,,	६ से ६—३० तक
स्वाध्याय	३० ,,	६—३ से ७ तक
		शाम को
आसन, प्राणायाम जप और ध्यान	३ घंटा	६—१५ से ९—१५ तक
भोजन	१५ मिनिट	९—१५ से ९—३० तक
स्वाध्याय	३० ,,	९—३० से १० तक
निद्रा	५ घंटे	१० से ३ तक

८ और वी कोर्स वालों के लिये एकसा कार्यक्रम

		प्रात काल
आराम, छोटा हाज़िरी या एक प्याला दूध	१५ मिनिट	७ से ७—१५
निष्काम कर्म और घर		

का काम काज	१¼ घटे	७—१५ से ८—३० तक
नहाना धोना और कलेवा	१ घटा	८—३० से ९—३० तक
दफ्तर	३ घंटा	१० से १ तक
लंच, पत्र लेखन या वार्तालाप	१ घटा	१ से २ तक
दफ्तर	३ घटे	२ से ५ तक
जलपान और आराम	१५ मिनिट	५ से ५—१० तक
शाम का घूमना लगभग दो मील सत्सङ्ग श्रवण आदि	१ घटा	५—१५ से ६—५ तक

वेदान्त सी पूर्ण अभ्यासियों के लिये

प्रात काल

ध्यान	३ घटे	३—३० से ६—३० तक
आसन प्राणायाम	२ घटे	६—३० से ८—३० तक
जप	३० मिनिट	८—३० से ९ तक
आसन, प्राणायाम	२ घटे	५ से ७ तक
भोजन और जप	३० मिनिट	७ से ७—३० तक
ध्यान	२½ घटे	७—३० से १० तक
निद्रा	५ घटे	१० से ३ तक

उपरोक्त कामो के अतिरिक्त जो समय मिले, उसमें मौन रहो, निष्काम्य कर्म, कीर्तन, स्वाध्याय, स्नान, भोजन आराम आदि

करने में लगाओ। अपनी उन्नति शक्ति और सुविधा के अनुसार योगाभ्यासियों को अपनी दिनचर्या बना लेना चाहिए।

ध्यान देने योग्य बातें

१—योगाभ्यासियों की दिनचर्या एकसी रहनी चाहिए। जहाँ कहीं थोड़ा बहुत परिवर्तन भले ही कर लो, किन्तु दिनचर्या के सब अङ्ग ठीक होने चाहिए। आध्यात्मिक मार्ग में कोरी वेदान्त की गप्पों से काम न चलेगा। दिनचर्या का पालन नियमानुसार चाहे कुछ भी हो जाय, अवश्य करना चाहिए। दिनचर्या का कोई अङ्ग छोड़ना न चाहिए। ध्यान, जप, आसन और प्राणायाम का समय धीरे धीरे बढ़ाते रहना चाहिए।

२—बिस्तर से उठते ही पाखाने जाओ। पाखाने से आ कर ही नहा न सको तो हाथ पैर मुँह और सिर धो डालो। और फिर ध्यान आदि योगाभ्यास के लिए बैठ जाओ।

३—कुछ दिनों लगातार अभ्यास करने के उपरान्त आसन, प्राणायाम और ध्यान का समय बढ़ाने से सबेरे के घूमने और घर के काम काज में देने वाले समय को कम करना होगा। छुट्टी के दिन योगाभ्यास में नित्य की अपेक्षा अधिक समय लगाओ।

४—सबेरे के स्वाध्याय में गीता, उपनिषद्, रामायण आदि पढ़ो और रात्रि के स्वाध्याय में अन्य आध्यात्मिक पुस्तकें या पत्र पत्रिकाएँ पढ़ो। इन समयों में अपनी रुचि के अनुसार

पुस्तकें पढ़ना चाहिए। वार्तालाप और पत्र लेखन के निर्धारित समय में भी मनोरंजक पुस्तकें पढ़ सकते हो।

५—शाम के घूमने वाले समय में कुछ शारीरिक व्यायाम और प्राणायाम की कुछ आवृत्तियाँ की जा सकती हैं। प्राणायाम तथा अन्य कार्यों के करते समय थोड़ा बहुत मानसिक जप किया जा सकता है।

६—रात में कीर्तन करते समय अपने परिवार के लोगों, बच्चों और नौकरों को भी शामिल कर लो। कीर्तन के अन्त में प्रसाद बाँट दो।

७—निष्काम कर्म में रोगियों की सेवा या उपचार सबसे अच्छा काम है। यदि यह न कर सको तो गरीब विद्यार्थियों को मुफ्त पढ़ाओ और दान दो।

८—यदि किन्हीं अनिवार्य कारणों से योगाभ्यास की दिनचर्या के अनुसार तुम काम नहीं कर सकते, तो अपना समय मौन, स्वाध्याय या बागवानी में लगाओ। मन को सदा किसी उपयोगी काम में लगाये रखो।

९—"ग" नामक संक्षिप्त कार्यक्रम में आसन और प्राणायाम पहले करके तब बाद में जप और ध्यान करना चाहिए। बी नामक उन्नत कार्यक्रम में जप और ध्यान पहले करके तब आसन और प्राणायाम करना चाहिए क्योंकि प्रातःकाल ब्राह्म-मुहूर्त ध्यान के लिए बहुत अच्छा होता है उस समय खुमारी उतारने के लिए शीर्षासन का अभ्यास बहुत अच्छा होता है।

या जप और ध्यान के पहले दस मिनिट भस्त्रिका करने से भी खुमारी चली जाती है।

दिनचर्या का एक अङ्ग भी नित्य के अभ्यास में छूट जाने से अपने अमूल्य जीवन के एक मूल्यवान दिवस की तुमने हत्या कर दी। यदि सासारिक जीवन मे आध्यात्मिक अभ्यासों के करने मे विघ्न खडे हों तो बिना हिचकिचाहट के निष्ठुर भाव से ससार छोड कर एकान्त में गुरु के पादपद्मो की छाया में बैठ कर रात दिन आध्यात्मिक साधना करो। यदि तुम्हारी लगन सच्ची है, तुम्हारा अभ्यास यदि विधि और नियमपूर्वक और नित्य का है, तो तुम्हे अकथनीय सुख, मानसिक शान्ति और विशुद्ध आनन्द प्राप्त होगा। तुम्हारे मुखमण्डल पर ज्योति का प्रकाश होगा। ऐसा आदमी सारे ससार के लिए अभिमान की और भाग्य की वस्तु होगी। केवल इसी तरह के साधन द्वारा ही तुम्हे आन्तरिक सन्तोष और सुख प्राप्त होगा। यदि तुमने थोडे से सोंठ के बिस्कुटों, थोड स धन और स्त्री को पाकर ही सन्तोष कर लिया और अध्यात्म सुख के लिए कुछ न किया तो बुढापे मे बहुत पछताओगे।

हरि ॐ तत्सत्

ॐ—शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!